साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

मूल्य : 6/- रुपए

खेती संदेश

All Subject to Patiala Jurisdiction.

WEEKLY KHETI SANDESH

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210 • Chief Editor : Parminder Kaur • Issue Dt. 25-08-2025 • Vol.1 No.1 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • Mob. 90410-14575 • Page 12

पंजाब में अब किसान हाईब्रिड धान की कर पाएंगे खेती

पंजाब और हरियाणा हाईकोर्ट ने पंजाब सरकार के 7 अप्रैल के उस आदेश को रद्द कर दिया है, जिसमें पूरे राज्य में नोटिफाइड हाइब्रिड धान के बीजों पर पूरी तरह से रोक लगा दी गई थी। कोर्ट ने कहा कि यह आदेश कानूनी मानकों पर खरा नहीं उतरता। कोर्ट ने साफ किया कि भारत सरकार द्वारा बीज अधिनियम 1966 के तहत नोटिफाई किए गए बीजों के इस्तेमाल पर राज्य सरकार रोक नहीं लगा सकती।

जस्टिस कुलदीप तिवारी ने 4 अप्रैल 2019 और 10 अप्रैल 2019 के प्रशासनिक आदेशों को वैध माना, जिनमें केवल नान-नोटिफाइड हाइब्रिड बीजों पर प्रतिबंध लगाया गया था, जबकि नोटिफाइड बीजों की अनुमति दी गई थी। हाईकोर्ट की बेंच ने कहा कि 7 अप्रैल का प्रशासनिक आदेश, जिसमें नोटिफाइड हाइब्रिड धान के बीजों के इस्तेमाल पर रोक लगाई गई थी, कानूनी तौर पर सही नहीं था। इसलिए कोर्ट ने इस आदेश को रद्द कर दिया है।

क्या किसान कर सकते हैं हाइब्रिड बीज का इस्तेमाल

यह फैसला किसानों के लिए अहम है, क्योंकि अब वे बीज अधिनियम 1966 के तहत मंजूरशुदा हाइब्रिड धान बीज का इस्तेमाल कर सकते हैं। हालांकि राज्य सरकार को अब भी नॉन-नोटिफाइड बीजों पर रोक लगाने का अधिकार रहेगा। 59 पन्नों के अपने फैसले में जस्टिस कुलदीप तिवारी ने कहा कि राज्य सरकार के पास ऐसे बीजों पर रोक लगाने का कोई अधिकार नहीं है जो बीज अधिनियम, 1966 की धारा 5 के तहत कानूनी रूप से वैध हैं।

यह मामला जस्टिस तिवारी की बेंच के सामने उस समय आया जब पंजाब कृषि विभाग के प्रशासनिक आदेशों को लेकर सामूहिक चुनौती दी गई. शुरुआत में विभाग ने पूसा-44 और सभी तरह के हाइब्रिड धान के बीजों, चाहे नोटिफाइड हों या नॉन-नोटिफाइड पर पूरी तरह रोक लगा दी थी। हालांकि, 10 अप्रैल 2019 के संशोधन आदेश में आंशिक राहत दी गई और पंजाब के लिए स्वीकृत नोटिफाइड बीजों की अनुमति दे दी गई।

याचिकाकर्ता ने कोर्ट में क्या दिया था तर्क

याचिकाकर्ता कंपनियों और प्रभावित किसानों की ओर से पेश वरिष्ठ वकील मुनीषा गांधी और गुरमिंदर सिंह ने तर्क दिया कि राज्य सरकार के पास इतना व्यापक प्रतिबंध लगाने का कानूनी अधिकार नहीं है। उनका कहना था कि बीजों से जुड़ा विषय संविधान की समवर्ती सूची में आता है, जिस पर संसद को कानून बनाने का अधिकार है। भारत सरकार ने भी पंजाब सरकार के इस पूर्ण प्रतिबंध का विरोध किया। एडीशनल सॉलिसिटर जनरल सत्य पाल जैन के जरिए दाखिल जवाब में केंद्र ने कहा कि बीज अधिनियम, 1966 किसी भी प्राधिकरण को बीजों की आवाजाही रोकने या अनुमति देने का अधिकार नहीं देता, क्योंकि यह विषय राज्यों के बीच व्यापार से जुड़ा है, जो संविधान के अनुच्छेद 301 के तहत संरक्षित है।

2002 की राष्ट्रीय बीज नीति

केन्द्र ने यह भी बताया कि भारत सरकार धान, मक्का और कपास जैसी फसलों में हाइब्रिड बीजों के विकास को बढ़ावा दे रही है, ताकि उत्पादकता और किसानों की आमदनी में सुधार हो सके। इसके लिए 2002 की राष्ट्रीय बीज नीति समेत कई नीतियां लागू की गई हैं।

मटर की आधुनिक खेती

जलवायु एवं मिट्टी : मटर कम तापमान के लिए अनुकूलित है। पौधे की वृद्धि के लिए 13 से 18 डिग्री सैल्सियस के बीच का तापमान अच्छा होता है तथा अंकुरण के लिए 15-20 डिग्री सैल्सियस तापमान अच्छा होता है। मटर की फसल के लिए अधिक जीवांश वाली पोटाश से भरपूर दोमट मिट्टी अच्छी रहती है। मटर किसी भी भुरभुरी, अच्छी, जल निकास वाली, पपड़ी मुक्त भूमि पर उगाया जा सकता है। मिट्टी का पी.एच. 6.0-7.5 मान के बीच होना चाहिए। मटर की फसल जल-जमाव बर्दास्त नहीं कर पाता है।

किस्में :

1. अगेती किस्म :

आर्केल : यह झुर्रीदार बीज वाली अगेती किस्म है। पौधे बौने, हरे रंग के मज़बूत और ऊंचाई में 35-45 सैं.मी. ऊंचे होते हैं। फूल सफेद व फलियाँ आकर्षक गहरे हरे रंग की एवं 8 सैंटीमीटर लम्बी होती है। इनमें 7-8 मीठे दाने भरे होते हैं। बीज जब पूरी तरह पक जाते हैं, तो हल्के हरे-पीले रंग के हो जाते हैं। बुवाई के 55 से 60 दिन के बाद फलियों की पहली तुड़ाई होती है। हरी फलियों की औसत उपज 100 से 130 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है और बीज की पैदावार 15 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

मध्यम किस्म :

बोनविले : मध्यम लंबाई वाली, दोहरी फलियों युक्त, झुर्रीदार बीज वाली किस्म है। 55 से 60 दिनों में फल आते हैं। फलियां हल्के हरे रंग की, सीधी और लगभग 9 सैंटीमीटर लम्बी होती हैं। दाने मीठे और गहरे हरे रंग के होते हैं। बुवाई के 85-90 दिनों के अंदर मटर की फसल तैयार हो जाती है। फलियों की उपज 100 से 120 क्विंटल प्रति हैक्टेयर और बीज 12 से 15 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

लिंकन : यह मटर की मध्य मौसमी किस्म है, जिसके

रेषू भरद्वाज व डॉ. शिखा सिंह एवं डॉ. एम. के. सिंह,
बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, कांके (रांची)

पौधे बौने, मजबूत और पत्तियां गहरे हरे रंग की होती है। फलियां गहरे हरे रंग की लम्बी और सिरे पर हल्की सी मुड़ी हुई होती हैं, जिनमें 8 से 10 दाने होते हैं और दाने मीठे होते हैं। पहाड़ी इलाकों में बोने के लिए किस्म अधिक उपयुक्त है। पहली तुड़ाई बुवाई के 85-90 दिनों के बाद की जा सकती है।

भारत में उगाई जाने वाली मटर की अन्य किस्में : (1) बी.आर.-12 (2) अपर्णा (3) रचना (4) हरभजन (5) जवाहर मटर (6) जे.सी.-141 (7) बोनविले (8) हरा छोला।

बीज दर : मटर का बीजोपचार एफ.आई.आर. के सिद्धांत पर करें। पहले एफ का मतलब है फफूंदीनाशक बाविस्टिन 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज अथवा थिरम 2-2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज या ट्राइकोडर्मा विरीडी 5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करने के 24 घंटे के बाद क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. 8 मिलीलीटर प्रति किलोग्राम बीज से उपचारित कर लें। फिर दो दिन सुखाने के बाद एक पैकेट (200 ग्राम) राइज़ोबियम कल्चर से 10 किलोग्राम बीज उपचारित कर बीज बोएं।

बुवाई : अगेती किस्में जैसे अर्किल मध्य अक्तूबर से नवम्बर के प्रथम सप्ताह तक बोई जा सकती है। मध्य मौसमी किस्में जैसे बोनविले और लिंकन अक्तूबर के अंतिम सप्ताह से नवम्बर के मध्य तक बोई जा सकती है। पछेती किस्म नवम्बर के अंत तक बोई जा सकती है।

लगाने की दूरी : अगेती किस्मों में कतार से कतार की दूरी 30 सैंटीमीटर और मध्य मौसमी और पछेती किस्मों के लिए 45 सैंटीमीटर दूरी रखी जाती है। पौधे से पौधे की दूरी 10-15 सैंटीमीटर उपयुक्त है।

उर्वरकों का प्रयोग : बुवाई से 10-15 दिन पहले खेत की तैयारी करते समय गोबर की खाद 20 टन प्रति हैक्टेयर, यूरिया 12 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर डालें। इसके साथ-साथ 110 किलोग्राम डाई अमोनियम फास्फेट (डी.ए.पी.) व 40 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति हैक्टेयर की दर से दें।

सिंचाई : पहली सिंचाई बुवाई के 15 दिन बाद करनी चाहिए। यदि खेत में नमी कम हो तो 2-3 सिंचाई आवश्यकता-नुसार करनी चाहिए। फूल आने और फलियों के भरने के समय नमी की कमी नहीं होनी चाहिए।

खरपतवार नियंत्रण : फसल की बुवाई से पहले और बाद में पौधे उगने से पहले 900 लीटर पानी में 1.5 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से लिन्यूरान छिड़कने से सभी सदाबहार घासों (दूब) एवं खरपतवारों की रोकथाम हो जाती है। छिड़काव धूप वाले दिन ही जब हवा ना चल रही हो, किया जाना चाहिए। इस उपचार के 10-12 दिनों बाद तक फसल की सिंचाई नहीं करनी चाहिए। ध्यान रहे कि छिड़काव के समय खेत में पर्याप्त नमी हो। छिड़काव लिए कट अथवा फ्लैट फैन नोज़ल का प्रयोग करें। छिड़काव करते समय आगे से पीछे की ओर चलें, जिससे छिड़काव किए गए स्थान पर पैर ना पड़ें।

कीट प्रबंधन :

1. मटर की पत्ती का भेदक :

लक्षण : मटर की पत्तियों पर इसके लार्वा का आक्रमण होने से पत्तियों पर सफेद रंग की टेढ़ी-मेढ़ी नालियां बन जाती है और पौधों की बढ़वार रुक जाती है।

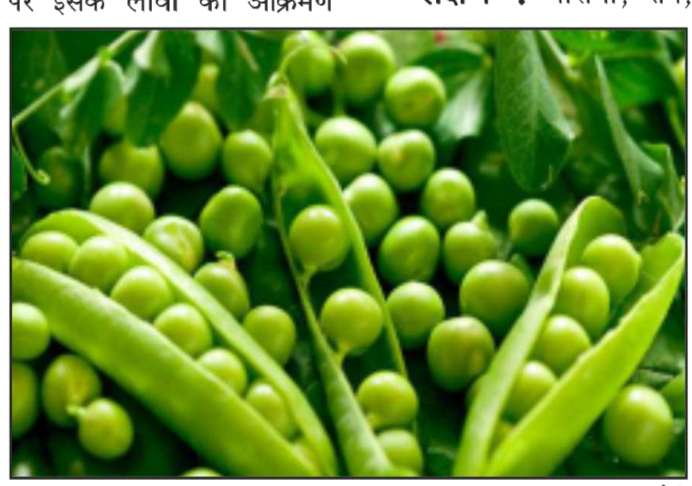

प्रबंधन : 0.05 प्रतिशत मिथाइल पाइराथियान का छिड़काव करने से इस कीट की रोकथाम की जा सकती है। यदि इसका प्रकोप दोबारा दिखाई पड़े तो इस उपचार को 15-20 दिन बाद दोहराना चाहिए।

2. माहू :

लक्षण : यह कीट पत्तियों तथा रसदार स्थानों से रस चूसता है। इसके बदले में ये चिपचिपे तरल पदार्थ का भारी मात्रा में स्त्राव करते है, जिससे काली फफूंदी आकर्षित होती है। इसके कारण प्रकाश संश्लेषण क्रिया बुरी तरह प्रभावित होती है। माहू का आक्रमण जनवरी के बाद होता है।

प्रबंधन : माहू का प्रकोप होने पर 0.05 प्रतिशत मैटासिस्टॉक्स का घोल छिड़कें। 15-20 दिनों के बाद यदि आवश्यक हो तो दोबारा छिड़काव करें।

3. फली छेदक :

लक्षण : यह कीट फलियों के रास्ते छेद करके फली में प्रवेश करता है और पौधे को हानि पहुंचाता है।

प्रबंधन : फसल पर 0.25 प्रतिशत कार्बोरिल का छिड़काव करके इस बेधक की रोकथाम की जा सकती है। इस बात की सावधानी रखनी चाहिए कि फलियां इस छिड़काव से पहले तोड़ी जाएं अथवा छिड़काव के 10 दिन के बाद ही तोड़ी जाएं।

रोग प्रबंधन :

1. पाऊडरी मिल्ड्यू / चूर्णी रोग :

लक्षण : पत्तियां, तने, शाखाएं तथा फलियां बुकनी जैसे पदार्थ से ढंक जाती है। इसका भीषण असर उस मौसम में होता है, जबकि दिन और रात के तापमान में काफी अंतर होता है तथा भारी ओंस गिरती है। यह बीमारी पछेती पकने वाली किस्मों को अधिक प्रभावित करती है। इस रोग में पत्तियों के ऊपर सफेद पाऊडर (चूर्ण) जैसा कवक (फफूंद) दिखाई देता है।

प्रबंधन : जैसे ही यह बीमारी दिखाई पड़े फसल पर प्रति हैक्टेयर 0.3 प्रतिशत वाले 3 ग्राम गंधक के फफूंदीनाशक को एक लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें और हर सात दिन बाद यह छिड़काव दोहराएं। दूसरे फफूंदीनाशक जैसे कैराथेन, बाविस्टिन का छिड़काव 1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से किया जा सकता है।

2. झुलसा रोग :

लक्षण : यह फफूंदजनित रोग है। इस रोग के लक्षण फूल निकलने से पूर्व पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं। साथ ही फूल पर भी गहरे भूरे रंग के धब्बे बनकर उसे सुखा देते हैं, जिससे फलियां बनती ही नहीं या सूख जाती हैं।

प्रबंधन : फसल को अक्तूबर के अंतिम सप्ताह में या नवम्बर में बोएं, क्योंकि इस समय बोई गई फसल साधारणतयः झुलसे के आक्रमण से बच जाती है। सितम्बर या अक्तूबर के शुरू में बोई गई फसल को इस बीमारी से सबसे अधिक नुकसान पहुंचता है।

कटाई तथा भण्डारण : सब्ज़ी के उद्देश्य से फलियों के उपयोग के अनुसार ही मटर को तोड़ा जाता है। जब फलियों का रंग गहरे से हल्के रंग में बदल रहा हो तथा वे अच्छी प्रकार भर गई हो तथा सख्त ना हो, तभी उन्हें तोड़ना चाहिए। फलियां तोड़ने के दौरान पौधे को सावधानी से पकड़ना चाहिए ताकि इसमें और फलियां लग सकें। यदि फलियां तोड़ते समय बेलें टूट गई हों तो शेष फलियां समुचित रूप से विकसित नहीं होंगी। बोई गई मटर की फसल की पूर्ण पकने पर कटाई की जाए। साफ-सुथरे खलियान में इसकी मड़ाई करके दाना निकालें।

उपज : मटर की बीज की औसत पैदावार 20-22 क्विंटल और फलियों की 100-130 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है।

कपास की फसल के प्रमुख रोग

रोग कारक और रोग के लक्षण कैसे जानें

डॉ. रघुबीर सिंह कालीरामणां,खण्ड कृषि अधिकारी, बरवाला (हिसार),
कृषि एवं किसान कल्याण विभाग, पंचकूला (हरियाणा)

कपास फसल का व्यवसायिक फसलों, प्राकृतिक रेशे वाली फसलों और तिलहन फसलों में विशेष स्थान है। प्राकृतिक फाइबर का कम से कम 90 प्रतिशत अकेले कपास की फसल से प्राप्त होता है। कपास फसल का देश की अर्थव्यवस्था में अहम् योगदान है। यह भारत में 125 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में उगाई जाती है। जो कृषि योग्य भूमि का करीब 7.5 प्रतिशत और वैश्विक कपास क्षेत्र का 36.8 प्रतिशत है।

भारत में 130 कीट प्रजातियां पाई जाती हैं। उनमें से आधा दर्जन से अधिक विकसित कपास, संकर और अन्य किस्मों की पूरी क्षमता से पैदावार प्राप्त करने में समस्या पैदा करती हैं। रोगों का प्रभावी नियंत्रण उनकी सही पहचान पर निर्भर करता है।

कपास की फसल के प्रमुख रोग एवं उनके रोग कारक और रोग के लक्षण इस प्रकार हैं :

1. जड़ गलन रोग : यह रोग देशी एवं अमेरिकन कपास दोनों में लगता है। अमेरिकन कपास और अमेरिकन कपास की बी.टी. संकर किस्मों में यह रोग कम-ज्यादा लगभग सभी किस्मों में लगता है।

रोग कारक : जड़ गलन रोग बीज एवं मृदा जनित राइजोक्टोनिया नामक फफूंद से होता जाती है। आमतौर पर इस बीमारी से लगभग 23 फीसदी नुकसान हर साल होता है।

2. विगलन या पौध अंगमारी या उखटा रोग : विगलन या उखटा रोग मुख्य रूप से देशी कपास में ही लगता है, जबकि जड़ गलन रोग देशी एवं अमेरिकन कपास दोनों में लगता है।

रोग कारक : विगलन या उखटा रोग बीज एवं मृदा जनित फ्यूजेरियम स्पिसीज नामक फफूंद से होता है।

रोग के लक्षण : यह रोग आमतौर पर पहली सिंचाई के बाद पौधों की 35 से 45 दिनों की उम्र में दिखना शुरू हो जाता है। विगलन रोग खेत में गोलाकार पेच गोले में दिखाई देते हैं। प्रभावित पौधे अचानक मुरझा कर धीरे-धीरे सूख जाते हैं। ऐसे पौधे हाथ से खींचने पर आसानी से उखड़ जाते हैं। विगलन रोग के कारण रोगी पौधों की जड़ें अंदर से भूरी व काली हो जाती हैं। रोगी पौधों को चीर कर देखने पर ऊतक काले दिखाई देते हैं। पौधों की पत्तियां मुरझा कर नीचे गिर जाती हैं। हवा और ज़मीन में ज्यादा नमी व गर्मी होने के कारण एवं सिंचाई से सही नमी का वातावरण मिलने पर यह रोग बढ़ता है। कपास के बीज उगने से पहले ही सड़ जाते हैं। अगर उग

है।

रोग के लक्षण : रोग आमतौर पर पहली सिंचाई के बाद पौधों की 35 से 45 दिनों की उम्र में दिखना शुरू हो जाता है। जड़ गलन रोग खेत में गोलाकार पेच/गोले में दिखाई देते हैं। प्रभावित पौधे अचानक मुरझा कर धीरे-धीरे सूख जाते हैं। ऐसे पौधे हाथ से खींचने पर आसानी से उखड़ जाते हैं। जड़ गलन रोग के कारण पौधों की जड़ों की छाल गल-सड़ कर अलग हो जाती है। इन जड़ों पर मिट्टी चिपकी रहती है तथा ये जड़ें नमी युक्त रहती हैं। ऐसी जड़ों का रंग पीला होता है तथा इस रोग से प्रभावित पौधों के सूखने पर भी पत्तियां तने पर लगी रहती हैं, गिरती नहीं हैं। कपास के बीज उगने से पहले ही सड़ जाते हैं। अगर उग भी जाते हैं, तो ज़मीन के बाहर निकलने के बाद छोटी अवस्था में ही मर जाते हैं, जिससे खेत में पौधों की संख्या घट जाती है व कपास के उत्पादन में कमी आ भी जाते हैं, तो ज़मीन के बाहर निकलने के बाद छोटी अवस्था में ही मर जाते हैं, जिससे खेत में पौधों की संख्या घट जाती है व कपास के उत्पादन में कमी आ जाती है।

3. कपास का पत्ता मरोड़ रोग : उत्तरी भारत में विषाणु पत्ता मरोड़ रोग कपास का एक महत्वपूर्ण रोग है। अमेरिकन कपास और अमेरिकन कपास की बी.टी. संकर किस्मों के लिए अभिशाप है।

रोग कारक एवं रोगाणु वाहक

सफेद मक्खी : यह रोग जैमिनी नामक विषाणु से पैदा होता है। यह जैमिनी विषाणु मोनोपारटाइट सिंगल स्ट्रेंडेड सरकुलर डी.एन.ए. जीनोम तथा दो सैटेलाइट डी.एन.ए. बीटा से मिल कर बना होता है। यह रोग बीज या मृदा जनित नहीं है। यह विषाणु रोगी पौधों से स्वस्थ पौधों तक सफेद मक्खी के वयस्कों द्वारा फैलाया जाता है।

रोग के लक्षण : रोगी पौधों की नई पत्तियों की शिराएं फूल कर उभर जाती हैं तथा गहरे हरे रंग की हो जाती हैं। प्रभावित पत्ती को सूर्य के प्रकाश में सीधी देखने पर पत्ती की बारीक शिराएं/नसें उभरी हुई तथा गहरे हरे रंग की दिखाई देती हैं। जैसे-जैसे रोग का प्रकोप बढ़ता है, प्रभावित पत्तियों की निचली सतह पर इन शिराओं पर कप जैसे आकार की पत्तियां बन जाती हैं, जिसे इनेषन कहते हैं। पत्तियों का रंग गहरा हरा होकर पत्तियां कठोर हो जाती हैं। प्रभावित पत्तियां ऊपर या नीचे की ओर मुड़ जाती हैं तथा प्रभावित पौधे बौने रह जाते हैं, जिन पर शाखाएं, फूल तथा टिण्डे कम बनते हैं। फलस्वरूप पैदावार तथा गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

वैकल्पिक पौधे (अल्टरनेट होस्ट) : यह विषाणु कपास के अलावा अनेक जंगली पौधों जैसे हिरणखुरी, आसकन्द, जंगली सूरजमुखी, बथुआ, खरबथुआ, साठा, गोखरू, भिण्डी, जंगली मिर्च, टमाटर आदि पर भी जीवित रहता है।

4. जीवाणु अंगमारी झुलसा या कोणीय धब्बा रोग : जीवाणु अंगमारी झुलसा उत्तर भारत की मुख्य बीमारी है। यह पौधों के सभी हिस्सों में लग सकता है। इस रोग को कई नामों से जाना जाता है।

रोग कारक : यह रोग बीज एवं मृदा जनित जेन्थोमोनास एक्जेनोपोडिस पैथोवार मालवेसियरम नामक जीवाणु से पैदा होता है।

रोग के लक्षण :

बीज पत्र पर : शुरू-शुरू में जीवाणु अंगमारी झुलसा रोग के लक्षण बीज-पत्रों (कॉटीलिडन) पर दिखते हैं। जीवाणु बीजों द्वारा बीज-पत्रों तक पहुंचते हैं तथा बीज-पत्रों के किनारे पर छोटे, गोलाकार या

शेष पृष्ठ 8 पर

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9–ए, अजीत नगर,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 98151–04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 90410–14575

वर्ष : 01 अंक : 01
तिथि : 25-08-2025

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड
डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly **'KHETI SANDESH'** Printed at **Drishti Printers**, Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com
Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

जलवायु परिवर्तन से प्रभावित होती भारतीय कृषि

मोनिका सूद, डॉ. अंजना ठाकुर, श्रीमती रेखा डोगरा,
कृषि विज्ञान केन्द्र, हमीरपुर, बड़ा–177044

किसी भी क्षेत्र में जल तथा वायु के पारस्परिक संयोग से उत्पन्न परिस्थितियां वहां की जलवायु कहलाती है। जलवायु का निर्धारण किसी क्षेत्र में विद्यमान विभिन्न कारक जैसे कि उस स्थान की भूगौलिक स्थिति, समुद्र तट से ऊंचाई, वहां पड़ने वाली प्रकाश की किरणों की तीव्रता तथा अवधि, वर्षा, आर्द्रता, तापमान, वायु वेग, वायुमंडल में पाई जाने वाली गैसें विशेषकर ग्रीन हाऊस गैसें (CO_2, CH_4, N_2O) आदि की सांद्रता व उनके आपसी सहयोग करते है।

मानव की दिन प्रति दिन बढ़ती महत्वकांक्षाओं के फलस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों जैसे जल, कोयला, तेल और जंगलों का अंधाधुंध दोहन हो रहा है, जिसके परिणाम स्वरूप वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड सहित कई विषैली गैसों की मात्रा में वृद्धि हुई है। वायुमंडल में जलवायु परिवर्तन का अत्याधिक प्रभाव कृषि पर पड़ रहा है। वातावरण में विभिन्न कारणों से आए परिवर्तनों के कारण परम्परागत रूप से उत्पादित कई फसलों का या तो अस्तित्व समाप्त हो चला है या तो समाप्ति की ओर अग्रसर है।

जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

1. कृषि पर प्रभाव : भारत एक कृषि प्रधान देश है। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ के समान है। 2007 की एक रिपोर्ट ने दावा किया है कि भारत की जनसंख्या, चावल और गेहूं का उत्पादन करने की क्षमता से अधिक तेज़ी से बढ़ रही है। भारत अपनी बढ़ती जनसंख्या को आराम से खिला सकता है और साथ ही साथ गेहूं व चावल को निर्यात भी कर सकता है, परन्तु परिवर्तित होती जलवायु इन फसलों के उत्पादन में एक गंभीर समस्या है, जोकि इनके उत्पादन को विभिन्न कारणों से प्रभावित करती है।

धान का उत्पादन : किसी क्षेत्र में धान का उत्पादन वहां वर्षा पर निर्भर करता है। जलवायु परिवर्तन के कारण बाढ़ व सूखे की स्थितियां बढ़ने पर इस फसल का उत्पादन अधिक प्रभावित होगा। यह भी अनुमान लगाया जा रहा है कि 2 डिग्री सैंटीग्रेड तापमान वृद्धि से धान का उत्पादन 0.75 टन प्रति हैक्टेयर कम हो जाएगा।

गेहूं का उत्पादन : यदि वायुमंडल के तापमान में 2 प्रतिशत सैंटीग्रेड की वृद्धि हो जाती है, तो गेहूं की उत्पादकता में 4–5 करोड़ टन की कमी होना अनुमानित है।

जलवायु परिवर्तन से ना केवल फसलों का उत्पादन अपितु उनकी गुणवत्ता भी प्रभावित होती है। भोजन में पाए जाने वाले पोषक तत्व जैसे प्रोटीन, विटामिन, खनिज आदि की कमी के कारण मनुष्यों को संतुलित आहार नहीं मिल पाएगा, जिसके परिणाम स्वरूप उनके स्वास्थ्य पर इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

2. ग्रीन हाउस गैसों का प्रभाव : जलवायु परिवर्तन का मुख्य प्रभाव उस क्षेत्र के तापमान में परिवर्तन द्वारा निर्धारित किया जा सकता है। ग्रीन हाउस गैसों की सांद्रता में वृद्धि, वहां के तापमान में बढ़ोत्तरी का मुख्य कारण है। यह गैसें पृथ्वी पर पहुंचने वाली प्रकाश की छोटी तरंग दैर्ध्य वाली किरणों को आने तो देती है, परन्तु लेटने वाली लम्बी तरंग दैर्ध्य वाली प्रकाश की किरणों (इन्फ्रारैड किरणों) का वायुमंडल में अवशोषण कर लेती है, जिसके फलस्वरूप वायुमंडल का तापमान बढ़ने लगता है और हमें गर्मी अनुभव होती है। ग्रीन हाउस गैसों के मुख्य घटक हैं कार्बन डाइऑक्साइड (64.3 प्रतिशत), मीथेन (17.0 प्रतिशत), नाइट्रस ऑक्साइड (6.0 प्रतिशत), फ्लोरीनेटड गैसें (0.8 प्रतिशत), अन्य गैसें है। पिछले 90 वर्षों में कार्बन डाइऑक्साइड की सांद्रता में लगभग 25 प्रतिशत वृद्धि का अनुमान लगाया जा रहा है। यद्यपि यह गैस पौधों द्वारा प्रकाश संश्लेषण में प्रयुक्त होती है और पौधों के लिए अत्याधिक आवश्यक है। परन्तु यह भी सत्य है कि यह गैस ग्रीन हाउस गैसों का मुख्य घटक होने के फलस्वरूप तापमान वृद्धि का सबसे बड़ा कारण भी है।

जल संसाधन पर प्रभाव : भारत देश के गांवों में जल के पारम्परिक स्त्रोत लगभग समाप्त होते जा रहे है। पुराने समय में किसान अपने खेतों में तालाब, कुंओं की व्यवस्था करके अधिक से अधिक वर्षा जल का संचय करते थे, ताकि ज़मीन की आर्द्रता व उपजाऊपन बना रहे। परन्तु वर्तमान में किसान बिजली से चलने वाले ट्यूबवैलों पर आश्रित हो गए हैं और हमारे पारम्परिक जल के स्त्रोतों की अनदेखी कर रहे हैं।

हमारी पृथ्वी का लगभग 2/3 भाग जल से ढका हुआ है, परन्तु पृथ्वी पर उपस्थित जल का लगभग 97 प्रतिशत भाग खारा है। मनुष्य के उपयोग हेतु जल की उपलब्धता केवल 136 हज़ार घन मीटर है। एक अध्ययन के अनुसार यह पाया गया है कि पूरे विश्व में पानी की खपत प्रत्येक बीस वर्ष में दोगुनी हो जाती है। जलवायु परिवर्तन के कारण कृषकों के लिए जल की आपूर्ति की भयंकर समस्या तथा बाढ़ एवं सूखे की बारम्बारता में वृद्धि होगी।

जल की उपलब्धता पर प्रभाव : वायुमंडलीय तापमान में वृद्धि के कारण देश के उष्णकटिबंधीय जलवायु वाले राज्य जैसे महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, राजस्थान, उत्तरी कर्नाटक जो कृषि के लिए वर्षा जल पर आश्रित रहते है, यहां भूमिगत जल के स्तर में कमी आ जाएगी, जिसके फलस्वरूप इन क्षेत्रों में निकट भविष्य में सूखे जैसी स्थिति उत्पन्न होने की संभावना पैदा हो सकती है। यदि यहां सिंचाई की उचित व पर्याप्त व्यवस्था नहीं हो पाई, तो यहां के किसान पारम्परिक फसलों का त्याग कर ऐसी फसलों को उगाने के लिए विवश हो सकते है, जिनकी जल की आवश्यकता कम हो और शीघ्र पकने में सक्षम हों।

मिट्टी पर प्रभाव : खेतों में रासायनिक खादों के अंधाधुंध प्रयोग के कारण खेतों में मिट्टी की उर्वरता दिन प्रति दिन समाप्त होती जा रही है। तापमान वृद्धि के कारण मिट्टी में नमी कम बन रही है, जिससे इसकी कार्यक्षमता प्रभावित हो रही है। पेड़-पौधों के विवेकहीन कटान के फलस्वरूप बाढ़ जैसी आपदाओं की संभावना बढ़ने लगी है, जिससे मिट्टी की उपजाऊ परत का क्षरण हो रहा है। इसके विपरित जलाश्यों में पानी का स्तर कम होने से सूखे की स्थिति उत्पन्न हो रही हैं, जोकि मिट्टी की लवणता को बढ़ाती है। फसलों के अवशेषों को खेतों में ही जला दिया जाता है, जिसके कारण मिट्टी की उर्वरता में तो कमी आती ही है परन्तु इसके साथ-साथ भूमि में जीवांश कार्बन की मात्रा में भी कमी आ जाती है। एन.जी.टी. व कई राज्यों की सरकारों ने फसलों की कटाई के बाद अवशेषों को जलाना दंडनीय अपराध घोषित कर दिया है। मिट्टी की उर्वरता में कमी के कारण जैव विविधता में भी कमी आती है, जिसके फलस्वरूप हमारा पर्यावरण गंभीर रूप से प्रभावित हो रहा है।

मृदा की उर्वरता पर प्रभाव : मृदा की उर्वरता उसमें उपस्थित कार्बनिक पदार्थों के सड़ने-गलने व उर्वरकों के बने रहने से होती है। तापमान में वृद्धि के कारण कार्बनिक पदार्थों के विघटन की दर प्रभावित होती है। तापमान में वृद्धि से वाष्पीकरण की दर भी बढ़ रही है, जिसके फलस्वरूप कम वर्षा वाले क्षेत्रों में लवणों के जमा होने से फसल उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

इसके अतिरिक्त समुद्र तट के निकटवर्ती क्षेत्रों के जलमग्न होने से भूमि के लवणीय होने का खतरा भी बढ़ रहा है, जिससे उपजाऊ व अच्छी ज़मीन की निरंतर कमी होती जा रही है।

फसल-चक्र/क्रम पर प्रभाव : जलवायु परिवर्तन का फसल-चक्र और क्रम पर भी काफी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। तापमान वृद्धि के कारण पारम्परिक फसलें जैसे कि गेहूं, जौं, मटर, चना, आलू आदि की खेती करना निकट भविष्य में शायद लाभप्रद ना रहे। इसी प्रकार से शीतोष्ण वाले क्षेत्रों में जहां निम्न तापमान के कारण समतापीय जलवायु वाली फसलों जैसे धान, मक्का, ज्वार, बाजरा, सोयाबीन, मूंग, मूंगफली आदि का उत्पादन भी मुश्किल हो जाएगा।

रोगाणुओं तथा कीटों की समस्या में वृद्धि : वायुमंडलीय तापमान व आर्द्रता में हो रहे लगातार परिवर्तन के कारण नए पैथोटाइपस व बायोटाइपस के विकास की समस्या बढ़ गई है। पर्यावरण में ऋतु परिवर्तन के कारण कभी ठंडक तथा कभी गर्मी पड़ने से कीटों तथा रोगों को फैलाने वाले सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता में भारी कमी हो जाती है, परन्तु वर्तमान में तापमान व आर्द्रता में वृद्धि के कारण इनकी क्रियाशीलता बरकरार रहती है और इनकी संख्या में निरंतर वृद्धि होती जाती है।

खरपतवारों का प्रभाव : हमारे पर्यावरण में परिवर्तन के कारण शीतोष्ण जलवायु में समतापीय खरपतवारों के बढ़ने की संभावना बढ़ गई है। यह खरपतवार वर्तमान में फसलीय पौधों की अपेक्षा बढ़ते हुए तापमान वाली पर्यावरणीय स्थिति के लिए अधिक अनुकूल है, जिसके परिणामस्वरूप यह पौधे, फसलीय पौधों को उत्तरजीविता के लिए प्रतिस्पर्धा देते हैं।

पराबैंगनी किरणों का प्रभाव : सूर्य के प्रकाश में उपस्थित पराबैंगनी किरणें भी जलवायु परिवर्तन के मुख्य कारकों में से एक है। वायुमंडल के समताप मंडल (स्ट्रेटोस्फियर) परत में ओज़ोन गैस की मोटी चादर इन हानिकारक किरणों का अवशोषण इन्हें पृथ्वी पर पहुंचने से रोकती है, परन्तु पर्यावरण प्रदूषण के कारण अनेक प्रकार की विषैली गैसें वायुमंडल में उत्सर्जित होती हैं, जोकि इस परत का क्षरण करके इसे पतला बना रहे हैं। यदि यह जीवन रक्षक परत वायुमंडल से गायब हो गई, तो पृथ्वी पर जीवन असंभव हो जाएगा।

जलवायु परिवर्तन के कृषि पर तात्कालिक एवं दूरगामी प्रभावों के अध्ययन की आज अत्याधिक आवश्यकता है। मनुष्य का आज यह कर्तव्य है कि वह प्रकृति और विकास के बीच एक सामाजस्य बढ़ा कर अपना जीवन यापन करें। यदि वह इसी प्रकार प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध प्रयोग करके प्रकृति के साथ खेलता रहा, तो यह पृथ्वी ना केवल मनुष्य, अपितु अन्य निर्दोष जीवों के रहने के लिए भी उपयुक्त नहीं होगी।

बदलाव के बीज से ही लहलहाएंगी फसलें

शुरुआत करने के लिए, निश्चित रूप से पंजाब को फसल विविधीकरण की जरूरत है, जो प्रचलित गेहूं-धान फसल चक्र पद्धति की जगह ले सके, लेकिन लैंड पूलिंग वह विविधीकरण नहीं था, जिसकी आस पंजाब को है। मेरी समझ में लैंड पूलिंग योजना वास्तव में नीति निर्माताओं में व्याप्त 'बौद्धिक सूखे' का अक्स है और इसमें सेवारत के अलावा प्रभावशाली सेवानिवृत्त नौकरशाही, दोनों, शामिल हैं। कुछ महीने पहले पंजाब विश्वविद्यालय में आयोजित एक नीति संवाद में, सेवानिवृत्त नौकरशाहों को खेती की एवज में तेज औद्योगीकरण की वकालत करते सुनना कोई हैरानी की बात नहीं थी।

हमारे राजनेता और नीति-निर्माता क्यों नहीं चीन से यह बात सीखते कि कैसे उसने 12 करोड़ हैक्टेयर उपजाऊ जमीन पर एक 'लाल रेखा' खींच दी है, क्योंकि भविष्य की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के वास्ते इतनी जमीन संरक्षित करना एक आवश्यकता है।

कुछ साल पहले, 'इंडिया अगेंस्ट करप्शन' नामक संगठन के स्थापना-वर्षों के दौरान, अरविंद केजरीवाल चाहते थे कि मैं उनके करीबी विश्वासपात्र मनीष सिसोदिया द्वारा महाराष्ट्र के अहमदनगर जिले के एक गुमनाम से गांव हिवारे बाजार पर बनाई गई एक दस्तावेजी फिल्म देखूं, जो अपने चमत्कारिक कायाकल्प के कारण अचानक से खबरों में छाई थी।

सिसोदिया की इस फिल्म में दिखाया गया था कि कैसे एक बारहों माह सूखाग्रस्त एवं अभावग्रस्त गांव ने ग्राम सभा में सामूहिक निर्णय लेने की प्रक्रिया पर अमल करते हुए, स्वशासन के जरिए खुद को एक जीवंत आदर्श गांव में बदल डाला। इस गांव में वयस्कों की औसत वार्षिक आय जहां वर्ष 1989 में महज 8,000 रुपये थी वह 2012-13 की शुरुआत में बढ़कर 28,000 रुपये हो गई। मुख्य रूप से, जनभागीदारी आधारित सर्वांगीण विकास के इस उल्लेखनीय मॉडल ने अंतत: गांव में 54 करोड़पति पैदा कर दिए।

कोई हैरानी नहीं कि एक वक्त यह गांव सबसे अधिक सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) वाला रहा। जीडीपी से भी ज्यादा यह जानना महत्वपूर्ण है कि इसने गरीबी और अभाव से जुड़े तमाम प्रतीकों जैसे कि बढ़ती शराबखोरी, बीमारियों का प्रसार, शिक्षा की कमी को सफलतापूर्वक रोक दिया। नतीजतन गांव में विपरीत-पलायन होने लगा। जब किसी गांव में आर्थिक बदलाव आता है, तो जो लोग पेट की खातिर गांव छोड़कर जाने को मजबूर हुए, वे वापस लौटना चाहते हैं।

कोई नौ साल पहले, मुझे सुखद आश्चर्य हुआ जब केजरीवाल ने शहिवारे बाजार की कहानी, अरविंद केजरीवाल की जुबानीश, नामक शीर्षक वाली अन्य यूट्यूब वीडियो की कहानी बड़ी वाक्पटुता से मुझे सुनाई थी। वह चाहते थे कि गांव के अद्‌भुत सरपंच पोपट लाल के नेतृत्व में जिस सामाजिक-आर्थिक सोच ने रास्ता दिखाया, उसका अनुसरण देश भर के सभी 7 लाख गांवों में किया जाए। बस उन्हें सुनिए और आपको अहसास होगा कि कैसे केजरीवाल ने ग्रामीण समृद्धि लाने की एक 'पारसमणि' खोज ली थी। दरअसल, वीडियो में वे एक नया पंजाब बनाने की बात भी करते है और कहते है कि यदि आम आदमी पार्टी की सरकार आई तो इस कृषि प्रधान सूबे में हिवारे बाजार की सफलता गाथा को लागू किया जाएगा। लेकिन, हमेशा की तरह, सरकार बनने के बाद, यह भी एक भूली-बिसरी कहानी बनकर रह गई।

पार्टी को मिले भारी चुनावी जनादेश को देखते हुए, यह अवसर निश्चित रूप से मौजूद था। कुल 117 सीटों में आम आदमी पार्टी को 92 पर मिली जीत के साथ, उसके पास हिवारे बाजार के अनूठे विकास मॉडल को अपनाकर भविष्य की राह फिर से गढ़ने के लिए पर्याप्त अनुकूल परिस्थितियां थीं, जिससे आखिरकार एक नए पंजाब के उदय की रूपरेखा को प्रदर्शित किया जा सकता था। एक कृषि प्रधान राज्य होने के नाते, बिखरती कृषि-आर्थिकी से स्थाई रूप से पार पाने के लिए जरूरी तमाम अवयव पंजाब के पास मौजूद है, न केवल जलवायु-अनुकूल है बल्कि आर्थिक-पर्यावरणीय रूप से व्यवहार्य और समृद्ध एक अद्‌भुत ग्रामीण क्षेत्र के तौर पर भी। अगर एक सूखाग्रस्त गांव 54 करोड़पति पैदा करने पर गर्व कर सकता है, तो कल्पना कीजिए कि पंजाब के 12,000 से ज्यादा गांव, जहां पहले से ही 98 प्रतिशत खेत सिंचाई युक्त है, वहां कितनी बड़ी संख्या में करोड़पति आसानी से पैदा हो सकते हैं। अगर पानी को गांवों के विकास की धुरी के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है, तो निश्चित रूप पंजाब से बहुत आगे है।

आवश्यक रूप से इसके लिए एक नई एवं कल्पनाशील सोच की आवश्यकता है, जिसका मास्टर प्लान पहले से ही मौजूद है। लेकिन अपनी सहूलियत के हिसाब से इसको ठंडे बस्ते में

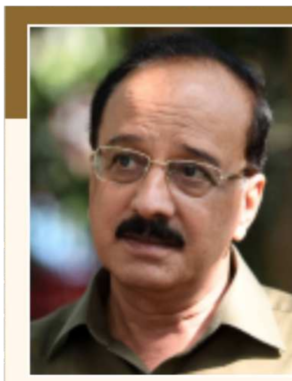
दविंदर शर्मा

डालकर, आम आदमी पार्टी ने स्पष्ट रूप से इस महान अवसर को गंवा दिया है। और अब सिसोदिया द्वारा अपनी पार्टी कार्यकर्ताओं को दी गई यह नवीनतम सलाह - '2027 का चुनाव जितवाने के लिए, साम, दाम, दंड, भेद, सच, झूठ, सवाल, जवाब, लड़ाई, झगड़ा जो करना पड़ेगा... तैयार है जोश के साथ?', सब कुछ उजागर कर जाती है। इसलिए यह स्पष्ट है कि लैंड पूलिंग योजना अकारण नहीं थी। मेरी हताशा राजनीतिक नेतृत्व की उस कथनी पर यकीन न कर पाने से भी है, जिसे वे बार-बार हमें बताते रहते हैं। शुरुआत करने के लिए, निश्चित रूप से पंजाब को फसल विविधीकरण की जरूरत है, जो प्रचलित गेहूं-धान फसल चक्र पद्धति की जगह ले सके, लेकिन लैंड पूलिंग वह विविधीकरण नहीं था, जिसकी आस पंजाब को है। मेरी समझ में लैंड पूलिंग योजना वास्तव में नीति निर्माताओं में व्याप्त 'बौद्धिक सूखे' का अक्स है और इसमें सेवारत के अलावा प्रभावशाली सेवानिवृत्त नौकरशाही, दोनों, शामिल हैं। कुछ महीने पहले पंजाब विश्वविद्यालय में आयोजित एक नीति संवाद में, सेवानिवृत्त नौकरशाहों को खेती की एवज में तेज औद्योगीकरण की वकालत करते सुनना कोई हैरानी की बात नहीं थी।

यह सिर्फ पंजाब में सत्तारूढ़ आम आदमी पार्टी नहीं, देशभर में हर किस्म के राजनीतिक दल जमीनें हड़पने में लगे हैं। किसी भी प्रमुख दल का नाम लीजिए, उसकी नजर जमीन हड़पने पर ही है। हरियाणा आगामी 6 नए इंटिग्रेटेड मल्टीमॉडल टाउनशिप के लिए 35,000 एकड़ जमीन अधिग्रहण करने की योजना बना रहा है। कर्नाटक में, साढ़े तीन साल तक चले किसानों के लंबे विरोध प्रदर्शन के बाद, मुख्यमंत्री ने बेंगलुरु के आसपास के 13 गांवों तक फैले देवनहल्ली तालुका में 1,777 एकड़ कृषि भूमि का अधिग्रहण करने वाला फैसला वापस ले लिया है। इत्यादि।

इसे कुछ भी नाम दें, 164 गांवों में लगभग 65,553 एकड़ भूमि का अधिग्रहण उस तरह का विविधीकरण नहीं था जिसकी पंजाब को जरूरत थी। यह जमीन हड़पने की योजना के अलावा कुछ नहीं थी। पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा चार हफ्तों के लिए लैंड पूलिंग नीति पर रोक लगाने के तुरंत बाद, किसान समूहों की ओर से तीखी प्रतिक्रिया आई, जिसमें ट्रैक्टर रैलियां और कई गांवों में आम आदमी पार्टी के नेताओं के लिए 'प्रवेश निषेध' नोटिस बोर्ड और बैनर लगना शामिल थे, इसके चलते पंजाब सरकार द्वारा घातक नीति को

वापस लेने का फैसला राहत की सांस के रूप में आया, जिसकी बहुत जरूरत थी। सनद रहे, न्यायालय ने यह भी कहा था कि अधिगृहीत की जा रही भूमि अत्यंत उपजाऊ है और द्विफसलीय है, जिसका अर्थ है कि केवल असाधारण मामलों में ही इसका अधिग्रहण हो सकता है, और इस तरह यह नीति भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 2013 के प्रावधानों के विरुद्ध जाती है।

इतना ही नहीं, भारत-माला राजमार्ग परियोजना के तहत जमीन के अधिग्रहण से, जिसमें हर 10 किलोमीटर पर फूड कोर्ट बनने हैं, उपजाऊ जमीन तेजी से हड़पी जा रही है। और यह मुझे आश्चर्यचकित करता है। हमारे राजनेता और नीति-निर्माता क्यों नहीं चीन से यह बात सीखते कि कैसे उसने 12 करोड़ हैक्टेयर उपजाऊ जमीन पर एक श्लाल रेखाश खींच दी है, क्योंकि भविष्य की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के वास्ते इतनी जमीन संरक्षित करना एक आवश्यकता है। भारत में दूरदर्शी नेताओं की ऐसी फसल कब होगी जो पंजाब को उस भूमिका के लिए बचाकर रख सके, जिसे फिर से निभाने को कहने की नौबत भविष्य में बनने वाली है-जलवायु अनिश्चितताओं के वक्त एक भूखे राष्ट्र को फिर से भोजन उपलब्ध कराना।

सत्ता में किसी भी तरह बने रहने के लिए साम, दाम, दंड, भेद जैसे हथकंडे लागू करने की बजाय पंजाब को भगवंत मान सरकार से उम्मीद थी कि वह अपने गांवों में बदलाव के बीज बोते, जिससे हजारों फूल खिलते।

निश्चित तौर पर पंजाब को एक ऐसी नीतिगत रूप-रेखा की जरूरत है जो एक क्षीण होती कृषि सभ्यता को लगभग पतन से बचा सके। न कि वह जो इसकी बहुमूल्य जमीनी संपदा को बेचने पर आमादा हो।

लेखक कृषि एवं खाद्य संबंधी मामलों के विशेषज्ञ हैं।

अमरूद की वैज्ञानिक खेती

अमरूद हमारे देश की प्रमुख फसल है। गरीबों के सेब के रूप में पसंदीदा अमरूद भारत की एक लोकप्रिय फसल है। अमरूद उष्ण-उपोष्ण कटिबंधीय देशों की एक महत्वपूर्ण फल फसल है। यह मिर्टेसी परिवार की सबसे मूल्यवान प्रजाति के रूप में जानी जाती है। यह मूलत: उष्ण कटिबंधीय अमेरिका से है और वर्तमान में कई उष्ण कटिबंधीय देशों में वितरित है।

अमरूद पोषक तत्वों का एक बहुत अच्छा स्त्रोत है। इसमें विटामिन सी की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक पाई जाती है। खनिज तत्वों में कैल्शियम, फास्फोरस व लोहा प्रमुख रूप से पाए जाते हैं। अमरूद पेक्टिन का भी अच्छा स्त्रोत है, इसलिए इसके फलों से अच्छी जैली तैयार की जाती है।

अमरूद भारत में चौथा सबसे अधिक उगाया जाने वाला फल है। इसका क्षेत्रफल 0.26 मिलियन (2.6 लाख) हैक्टेयर है, जिससे 3.67 मिलियन (36.7 लाख) टन फल का वार्षिक उत्पादन होता है। अमरूद उत्पादन में उत्तर प्रदेश अग्रणी राज्य है, उसके बाद मध्य प्रदेश और बिहार हैं। इसे भारत के लगभग सभी राज्यों में उगाया जाता है।

अमरूद भारत के अलावा चीन, इंडोनेशिया, पेरू, दक्षिण अफ्रीका, ब्राज़ील, मैक्सिको, न्यूज़ीलैंड, फिलीपींस और थाईलैंड आदि की मुख्य फसल है। भारत में 160 से अधिक अमरूद की किस्में है, जिनकी राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में मांग है। ब्राज़ील, मैक्सिको, थाईलैंड, पेरू और फिलीपींस प्रमुख निर्यातक देशों के रूप में जाने जाते है। अमरूद को लगभग हर प्रकार की मृदा में उगाया जा सकता है, परन्तु गुणवत्ता युक्त उत्पादन हेतु बलुई दोमट भूमि अच्छी पाई गई है। अमरूद की खेती 4.5 से 9.0 पी.एच. मान वाली मृदा में की जा सकती है, परन्तु 7.5 से पी.एच. मान से ऊपर वाली मृदा में उकठा (बिल्ट) रोग की संभावना अधिक होती है।

उन्नत किस्में : इलाहाबाद सफेदा, लखनऊ-49, ललित, लाल गूदा, बनारसी, चित्तीदार, ग्वालियर-27, ऐपल कलर, बेदाना आदि अमरूद की उन्नत किस्में है।

संकर किस्में : संकर किस्मों में सफेद जाम, कोहीर सफेदा, अर्का अमूलिका, अर्का मृदुला, हाईब्रिड-16 आदि प्रमुख किस्में है।

प्रवर्धन : अमरूद का रोपण बीज व वानस्पतिक विधियों द्वारा किया जा सकता है, लेकिन बीज द्वारा प्रसारित पौधों की गुणवत्ता अच्छी नहीं होती है तथा फल आने में अधिक समय लेते है। अत: अमरूद का बाग लगाने के लिए वानस्पतिक विधियों द्वारा तैयार पौधों का ही उपयोग करना चाहिए। अमरूद के व्यवसायिक प्रसारण हेतु पैच बंडिंग, गूटी, विनियर व भेंट कलम विधि का उपयोग करके पौध तैयार करनी चाहिए।

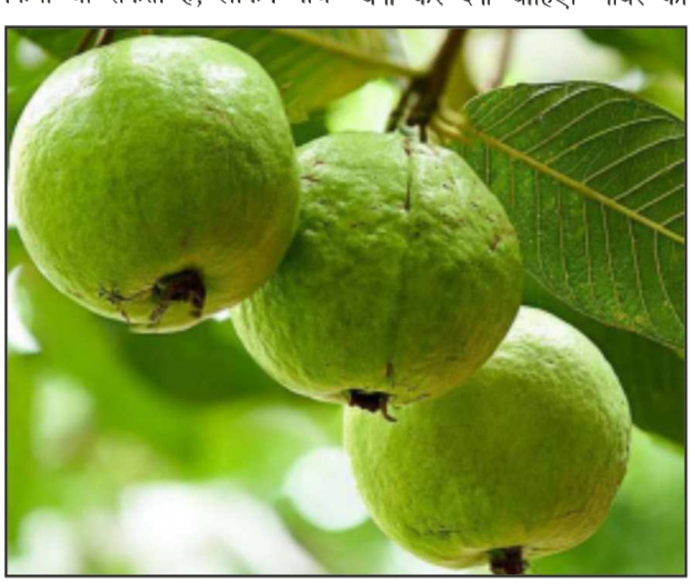

आजकल संघन बागवानी से बहुत अच्छे परिणाम प्राप्त हो रहे है। संघन रोपण में प्रति हैक्टेयर 500 से 5000 पौधे रखे जाते है तथा समय-समय पर कटाई-छंटाई करके एवं वृद्धि नियंत्रकों का प्रयोग करके पौधों का आकार छोटा रखा जाता है। इस तरह की बागवानी से प्रति हैक्टेयर 30 से 50 टन उत्पादन किया जा सकता है।

अमरूद में पौध रोपण का मुख्य समय जुलाई से अगस्त तक है। सिंचाई सुविधा यदि उपलब्ध हो तो फरवरी-मार्च में भी पौध लगाई जा सकती है। बाग लगाने से पहले खेत को समतल कर लेना चाहिए। इसके पश्चात् 60×60×60 सैंटीमीटर के आकार के गड्ढे तैयार कर लेने चाहिए। इन गड्ढों में 15-20 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद, 500 ग्राम सुपर फास्फेट, 250 ग्राम पोआश व 25 ग्राम एल्ड्रेक्स चूर्ण को अच्छी तरह मिट्टी में मिला कर पौध लगाने से 15-20 दिन पहले भर देना चाहिए। बाग में पौध लगाने की दूरी किस्म, जलवायु एवं उर्वरता पर निर्भर करती है। बीजू पौधों को कलमी पौधों की तुलना में अधिक जगह की आवश्यकता होती है।

खाद एवं उर्वरक की मात्रा : अमरूद की पोषक तत्व खींचने वाली जड़ें तने के आस-पास एवं 30 सैंटीमीटर की गहराई में होती है। इसलिए खाद पेड़ के फैलाव के 15-20 सैंटीमीटर की गहराई में नालियां बना कर देना चाहिए। गोबर की खाद, फास्फोरस व पोटाश की संपूर्ण मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा जून-जुलाई में वर्षा होने पर तथा शेष नत्रजन की आधी मात्रा सितंबर-अक्तूबर में वर्षा समाप्त होने पर पेड़ों को देनी चाहिए।

इसके अलावा 5 किलोग्राम (0.5 प्रतिशत) ज़िंक सल्फेट प्रति हैक्टेयर का छिड़काव फूल आने से पहले करने पर पौधों की वृद्धि व उत्पादन में बढ़त पाई गई है।

सिंचाई : एक से दो वर्ष पुराने पौधों की सिंचाई हल्की मृदा में 5-7 दिन तथा भारी मृदा में 10-15 दिन के अंतर पर करनी चाहिए। दो वर्ष से अधिक उम्र के पौधों को भारी मृदा में 20 दिन तथा हल्की मृदा में 10 दिन के अंतर पर थाला बना कर सिंचाई करनी चाहिए। पुराने पेड़ों में 20-25 दिन बाद सिंचाई करते रहना चाहिए और फसल तोड़ने के बाद सिंचाई बंद कर देनी चाहिए।

तालिका-1 : 100 ग्राम अमरूद में पोषक तत्वों की मात्रा
ऊर्जा

मूल तत्व	पोषक तत्वों की मात्रा
कार्बोहाइड्रेट्स	68 किलो कैलोरी
प्रोटीन	14.3 ग्राम
कुल वसा	2.55 ग्राम
कोलेस्टरोल	0.95 ग्राम
फाइबर	0 मि.ग्रा.
विटामिन ए	5.4 ग्राम
विटामिन सी	624 आई.यू.
विटामिन ई	228 मि.ग्रा.
सोडियम	0.73 मि.ग्रा.
पोटाशियम	4.7 कि.ग्रा.
कैल्शियम	18 मि.ग्रा.
लोहा	0.26 मि.ग्रा.
मैग्नीशियम	22 मि.ग्रा.
ज़िंक	0.23 मि.ग्रा.
फास्फोरस	1 मि.ग्रा.

असिंचित क्षेत्रों में थाले बना कर वर्षा जल से अमरूद को सिंचित करें तथा अगस्त-सितंबर में पत्तियां व घास-फूस बिछा कर नमी को संरक्षित करके उत्पादन में वृद्धि करें।

अमरूद में बूंद-बूंद सिंचाई पद्धति बहुत कारगर है। लगभग 60 प्रतिशत जल बच जाता है और फलों के आकार व उपज में भी वृद्धि होती है।

कटाई-छंटाई : प्रारंभिक अवस्था में कटाई-छंटाई का मुख्य कार्य पौधों को आकार देना होता है। पौधों को साधने के लिए 60-90 सैंटीमीटर तक सीधा बढ़ने देते है, फिर इस ऊंचाई के बाद 15-20 सैंटीमीटर के अंतर पर 3-4 शाखाएं चुन लेते है। इसके बाद मुख्य तने के शीर्ष एवं किनारों की शाखाओं की कटाई-छंटाई कर देनी चाहिए। पौधे की बढ़वार पर कोई भी प्रतिकूल प्रभाव ना पड़े, इसके लिए भूमि के आस-पास निकलने वाले प्ररोहों को निकालते रहना चाहिए। बड़े पेड़ों की सूखी व रोग ग्रसित टहनियों को निकालते रहना चाहिए, नहीं तो पौधों की बढ़वार पर फर्क पड़ता है। पुराने पौधों की कटाई-छंटाई से नई शाखाएं आती है, जिससे उत्पादन क्षमता बढ़ जाती है।

बहार ट्रीटमेंट : अमरूद में एक वर्ष में तीन फसलें ली जा सकती है, लेकिन वर्ष में एक फसल लेने का सुझाव दिया जाता है। अमरूद की फसल बरसात, सर्दी व बसंत में वर्गीकृत है। फसल के बाज़ार भाव व स्थान को ध्यान में रखते हुए कोई भी एक फसल लेनी चाहिए। अम्बे बहार (मार्च-अप्रैल), मृग बहार (जून-जुलाई) और हस्त बहार (अक्तूबर) यह तीन बहार है।

बरसात ऋतु में फसल के फल जल्दी पक जाते है तथा उत्तम गुण वाले नहीं होते है। इस फसल में कीट व रोगों का प्रकोप अधिक होता है। जाड़े की फसल के फल उत्तम गुण वाले होते है तथा फलों में विटामिन 'सी' की मात्रा भी अधिक पाई जाती है, जबकि बरसात की फसल में जाड़े की फसल के मुकाबले विटामिन 'सी' की मात्रा आधी पाई जाती है। ठंड में फलों का दाम भी अधिक मिलता है। बरसात की फसल को रोकने व ठंड में फसल लेने हेतु कुछ सुझाव आवश्यक है :

* चार वर्ष से अधिक उम्र के पौधों में फरवरी से जून तक पानी नहीं देना चाहिए, जिससे बसंत ऋतु में आए फूल गिर जाते है तथा वर्षा के बाद काफी मात्रा में फूल आते है।
* 10 प्रतिशत यूरिया घोल का छिड़काव मार्च व अप्रैल में करने से बसंत ऋतु में आए फूल व पत्तियां झड़ जाती है तथा मृग बहार (वर्षा के बाद) अच्छी रहती है।
* इसके अलावा बसंत ऋतु के फूलों को गिराने के लिए 100-200 पी.पी.एम. नेफ्थलीन एसेटिक एसिड के घोल का छिड़काव फूलों के ऊपर 20 दिन के अंतराल में दो बार करके सफलता प्राप्त होती है।

अमरूद के बागों से गुणवत्ता युक्त अधिक पैदावार लेने के लिए अच्छी किस्म, खाद, उर्वरक व सिंचाई ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि सही समय पर रोग नियंत्रण भी आवश्यक है। यदि रोग नियंत्रण ना हो तो फसल को भारी नुकसान होता है।

1. ग्लानि : यह अमरूद का सबसे विनाशकारी रोग है। इसका प्रकोप बरसात में अधिक होता है। रोगी पेड़ों की पत्तियां भूरे रंग की हो के पेड़ मुरझा जाता है।

प्रबंधन : पौध लगाने से पूर्व गड्ढे की मिट्टी में ट्राइकोडर्मा घोल (8-10 ग्राम पाउडर प्रति लीटर पानी) मिलाना चाहिए। बरसात के मौसम में उचित जल निकास की व्यवस्था करनी चाहिए। रोग के लक्षण दिखते ही पेड़ के आस-पास की मृदा को 0.2 प्रतिशत कार्बेन्डाज़िम के घोल से उपचारित करें।

2. श्याम वर्ण : यह रोग बरसात में अधिक देखने को मिलता है। रोगी फलों में शुरूआत में काली-काली चित्तियां पड़ जाती हैं और धीरे-धीरे वृद्धि रुक जाती है। ये फल पेड़ पर लगे रहते हैं और बाद में पूर्णतया काले हो जाते हैं।

प्रबंधन : रोग के लक्षण दिखाई देते ही कार्बेन्डाज़िम (0.1 प्रतिशत) के घोल का 10-15 दिनों के अंदर 2-3 बार छिड़काव करें। बागों को साफ रखना चाहिए और प्रभावित फलों को काट कर जला देना चाहिए।

3. फल विगलन : यह भी बरसात के मौसम में ही होता है। अधिक नमी वाले क्षेत्रों में भूमि के समीप के फल प्राय: कलिका वाले अग्र भाग से सड़ना प्रारंभ कर देते है और धीरे-धीरे पूरा फल सड़ जाता है।

प्रबंधन : रोग प्रारंभ होते ही फफूंदीनाशक जैसे कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2 प्रतिशत) के 2-3 छिड़काव करें। पेड़ों की शाखाओं को भूमि से छूने ना दें।

4. तना कैंकर : इसके लक्षण पेड़ों की शाखाओं की छाल पर दिखाई देते है। शाखाओं की छाल फट जाती है। प्रभावित छाल भूरे रंग की हो जाती है। प्रभावित भागों के ऊतक मर जाते है, जिसके कारण पौधे में पोषक तत्वों का आवागमन बंद हो जाता है। शाखाएं सूख जाती है और शीघ्र ही पूरा पेड़ सूख जाता है।

प्रबंधन : प्रभावित शाखाओं को काट कर जला देना चाहिए। कटे हुए भागों पर बोर्डो लेप (1 भाग चूना, 1 भाग कॉपर सल्फेट और 3 भाग अलसी का तेल) लगा देना चाहिए। तने से प्रभावित छाल हटा कर भी बोर्डो पेस्ट लगा देना चाहिए। ट्रैक्टर से जुताई करते समय पेड़ों की शाखाओं पर रगड़ न लगने दें, क्योंकि इसी रगड़ से रोग का प्रारंभ होता है।

5. फल वित्ति : इस रोग के प्रारंभिक लक्षण पत्तियों पर गुलाबी लाल धब्बों के रूप में दिखाई देते है। रोग बढ़ने पर धब्बों का रंग भी बदल कर भूरा हो जाता है। फलों पर काले रंग के धब्बे उभार युक्त होकर फट जाते है।

प्रबंधन : रोग लक्षण आते ही कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करें और यह छिड़काव बरसात के मौसम में अवश्य करें।

6. उकठा रोग : यह एक खतरनाक रोग है। एक बार होने पर पूरा बगीचा नष्ट हो जाता है। इसलिए ऐसी मृदा या खेत में कुछ सालों तक दोबारा अमरूद का बाग नहीं लगाना चाहिए। इस बीमारी में पौधे की शाखाएं और टहनियां एक-एक कर ऊपरी भाग से सूखने लगती है

शेष पृष्ठ 8 पर

मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने में केंचुओं की भूमिका

रेनू व आर.के. गुप्ता, जीव विज्ञान एवं मत्स्य पालन विभाग एवं तरनजीत कौर, जैव रसायन विभाग, चौ.च.सिं. हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

केंचुआ मिट्टी के जीव समुदायों का एक प्रमुख घटक है। ये मिट्टी की रासायनिक, जैविक और भौतिक प्रक्रियाओं को प्रभावित करते हैं और मिट्टी की यह प्रक्रियाएं केंचुए को प्रभावित करती है। वे मुख्य रूप से कार्बनिक पदार्थों का सेवन करके, इसे टुकड़े करके और इसे मिट्टी के खनिज कणों के साथ पानी के स्थिर समुच्चय के रूप में मिला कर मिट्टी निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। केंचुओं को किसान मित्र कहा जाता है। वे फसल की उपज के समग्र उत्पादन में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मिट्टी में उनकी गतिविधि से, केंचुए कई लाभ प्रदान करते हैं :

पोषक तत्व की उपलब्धता में वृद्धि, बेहतर जल निकासी और अधिक स्थिर मिट्टी की संरचना, ये सभी कृषि उत्पादकता में सुधार करने में मदद करते हैं। केंचुओं की गतिविधि विशेष रूप से चार अर्थों में कृषक के लिए महत्वपूर्ण है : (1) मिट्टी की संरचना में सुधार, (2) मिट्टी की जुताई, (3) ह्यूमस गठन में सहायता, एवं (4) पौधों के पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाना।

1. कृषि क्षेत्रों में मिट्टी के गुणों में सुधार करने में केंचुओं की भूमिका : केंचुए के मिट्टी में सुरंग बनाने और मिट्टी खाने की गतिविधियों के फसल उत्पादन और मिट्टी की गुणवत्ता पर कई लाभकारी प्रभाव पड़ते है। मिट्टी के निम्नलिखित गुणों को केंचुओं द्वारा सुधारा जा सकता है :

बेहतर जल निकासी : कुछ केंचुए की प्रजातियां खड़ी सुरंग बनाती है, जबकि अन्य प्रजातियां मिट्टी में क्षैतिज सुरंगों में रहती है। खड़ी सुरंग आमतौर पर खुली होती हैं, हालांकि केंचुए अवशेष और मलमूत्र के साथ शीर्ष को ढक देते हैं। खड़ी सुरंग मिट्टी में बेहतर जल निकासी के लिए प्रवेश के बहुत महत्वपूर्ण बिंदु है, खासकर स्थिर मिट्टी में। इसलिए केंचुए सुरंग बनाने की वजह से बेहतर जल निकासी में मदद करते हैं।

मिट्टी का वातन : पौधे की जड़ों को अपने विकास के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है, जबकि वे कार्बन डाइऑक्साइड का उत्पादन करते हैं। चूंकि केंचुए मिट्टी के छिद्रों में सुधार करते हैं, इसलिए वे वायुमंडल के साथ इन गैसों के लेन-देन में सुधार करते हैं। केंचुए दो तंत्रों द्वारा छिद्रों में सुधार बढ़ाते है : (1) स्थायी सुरंग बना कर और (2) मिट्टी एकत्रीकरण में सुधार करके। केंचुओं की आंत में मिट्टी और कार्बनिक पदार्थों के मिश्रण से एकत्रीकरण में सुधार होता है। ये अत्याधिक स्थिर समुच्चय कुछ केंचुओं द्वारा अपनी सुरंग में और दूसरों द्वारा मिट्टी की सतह पर जमा किए जाते हैं।

2. मिट्टी की जुताई : मिट्टी का संघनन मिट्टी के छिद्रों को कम करता है, क्योंकि केंचुए मिट्टी के छिद्र बढ़ाते है, वे संघनन के प्रभाव को कम करते हैं। इसके अलावा, केंचुओं के मलमूत्र में एक बहुत ही स्थिर संरचना होती है, जो मिट्टी को संघनन के लिए अधिक प्रतिरोधी बनाती है और बेहतर बनाती है।

मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ में सुधार : अपघटन प्रक्रिया में केंचुए मृत कार्बनिक पदार्थों को तोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह प्रक्रिया मृत पौधों और जानवरों में बंद पोषक तत्वों को छोड़ता है और जीवित पौधों द्वारा उपयोग के लिए उन्हें उपलब्ध करवाता है। केंचुए कार्बनिक पदार्थ खाकर और इसे छोटे-छोटे टुकड़ों में तोड़ कर बैक्टीरिया और फफूंद को उस पर फीड करने और पोषक तत्वों को छोड़ने की अनुमति देते हैं।

केंचुए मिट्टी की परतों को मिलाने और मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों को शामिल करने के लिए भी जिम्मेदार होते हैं। चार्ल्स डार्विन ने मिट्टी और कार्बनिक पदार्थों के इस मिश्रण के कारण केंचुओं को 'प्राकृतिक हल' भी कहा है। यह मिश्रण मिट्टी के माध्यम से कार्बनिक पदार्थ को फैलाने और उसमें मौजूद पोषक तत्वों को बैक्टीरिया, कवक और पौधों को उपलब्ध होने की अनुमति देकर मिट्टी की उर्वरता में सुधार करता है।

मिट्टी का पी.एच. : केंचुओं के आंत से होकर गुजरने वाली मिट्टी में एक तटस्थ पीएच होता है। यह संभवत: केंचुए की आंत में उत्पन्न कार्बनिक अणुओं की पी. एच. बफरिंग कार्यवाई के कारण है।

2. पोषक तत्वों की साइक्लिंग में केंचुओं की भूमिका :

* पोषक तत्वों की साइक्लिंग एक महत्वपूर्ण कार्य है, जो पृथ्वी पर जीवन के लिए आवश्यक है। केंचुओं की गतिविधि फायदेमंद है, क्योंकि यह खनिज मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ के तेज़ी से समावेश के माध्यम से मिट्टी के पोषक चक्रण को बढ़ा सकता है।

* इस मिश्रण के प्रभाव के अलावा, केंचुआ म्यूकस उत्पादन के माध्यम से अन्य लाभकारी मिट्टी सूक्ष्मजीवों की गतिविधि को बढ़ाता है।

* केंचुए अपने ऊतकों के माध्यम से पोषक तत्वों की आपूर्ति को प्रभावित करते हैं, लेकिन मोटे तौर पर उनकी सुरंग बनाने की गतिविधियों के माध्यम से वे मिट्टी में और/या मिट्टी की सतह पर समुच्चय और छिद्रों (जैव संरचनाओं) का उत्पादन करते हैं, इस प्रकार पोषक चक्रण और पौधे की वृद्धि को प्रभावित करते हैं।

* सूक्ष्मजीव समुदाय पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभावों के माध्यम से, केंचुए को नाइट्रोजन खनिज में वृद्धि के लिए भी जाना जाता है।

* फास्फोरस और नाइट्रोजन जैसे पोषक तत्व केंचुओं द्वारा पाचन के बाद पौधों के लिए आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं।

* केंचुआ मिट्टी में पोषक तत्वों को भी नीचे ले जाता है, जिससे उन्हें पौधों की जड़ों के साथ निकट सम्पर्क में लाया जाता है।

3. मिट्टी के जीवों को बढ़ाने में केंचुओं की भूमिका :

* *बैक्टीरिया और कवक :* मिट्टी में जीवाणुओं और कवक पर केंचुओं का सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। जहां केंचुए मौजूद होते हैं, वहां बैक्टीरिया और कवक अधिक होते हैं और वे अधिक सक्रिय होते हैं। यह बैक्टीरिया और कवक कार्बनिक पदार्थों से पोषक तत्वों को जारी करने और उन्हें पौधों को उपलब्ध करवाने में महत्वपूर्ण है। यह कई अन्य जानवरों जो मिट्टी में रहते हैं, के लिए भोजन का एक महत्वपूर्ण स्त्रोत है।

* *लाभकारी जीवाणु :* केंचुए के मल में लाभकारी जीवाणु होते हैं, जो फसल अवशेषों को सड़ने में मदद करते हैं।

4. निमाटोड नियंत्रण : कुछ केंचुए हानिकारक निमाटोड को खाते हैं, जिससे मिट्टी में इन हानिकारक जीवों का संकेंद्रण कम हो जाता है।

5. ह्यूमीफिकेशन में केंचुओं की भूमिका :

* कार्बनिक पदार्थ के विघटन में अंतिम प्रक्रिया को ह्यूमीफिकेशन के रूप में जाना जाता है और यह मूल रूप से कार्बनिक पदार्थों के बड़े कणों का एक जटिल अनाकार कोलाइड होता है, जिसमें फेनोलिक पदार्थ होते हैं।

* एपिजीक केंचुआ प्रजातियां सूक्ष्मजीवों या कूड़े सामग्री पर सीधे फीड कर सकती हैं और मिट्टी की कार्बनिक परत में वास कर सकती हैं।

* संभवत: केंचुए की आंत में उपलब्ध सूक्ष्म वनस्पतियों के कारण ह्यूमीफिकेशन की कुछ अंतिम प्रक्रियाएं होती हैं।

निष्कर्ष : केंचुए मिट्टी की उर्वरता को विशेष रूप से प्रभावित कर सकते है, जो कृषि प्रणालियों में स्थायी भूमि उपयोग को बढ़ाने के लिए बहुत महत्वपूर्ण हो सकते हैं। उचित केंचुआ प्रबंधन फसल की पैदावार को बनाए रख सकता है और उर्वरक आदानों को कम किया जा सकता है।

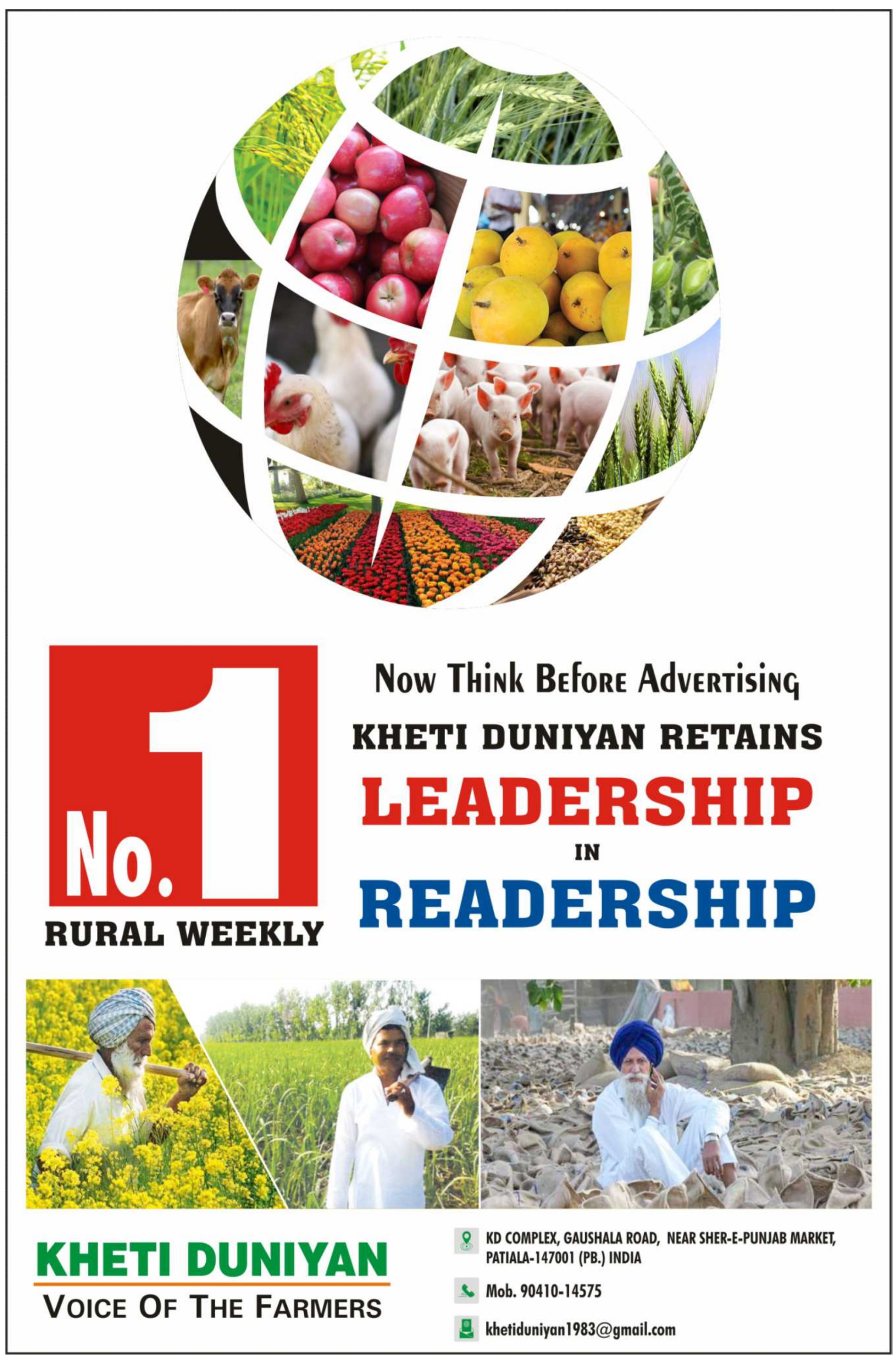

एलोवेरा पौधे के औषधीय उपयोग एवं लाभ

एलोवेरा एक चमत्कारी संजीवनी औषधीय पौधा है, जिसका उपयोग सदियों से किया जा रहा है। यह गर्म आर्द्र और अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में उगने वाला पौधा है। विश्व में इसकी 200 प्रजातियां पाई जाती है, जिनमें से मात्र 5 प्रजातियों को उपयोग उपचार हेतु किया जाता है। चीन, जापान और भारत इसके प्रमुख उत्पादक देश हैं। वर्तमान में अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ार में इसकी मांग में निरंतर वृद्धि हो रही है, कहने का अभिप्राय है कि यह एक महत्वपूर्ण औषधीय पौधा बन गया है। यह कम उर्वरा मृदा में सुगमता से उगने वाला पौधा है। इसे कम पानी व कम देखभाल की आवश्यता होती है। इसका उपयोग सौन्दर्य प्रसाधन उद्योग एवं औषधियों में उपयोग किया जाता है। इसके औषधीय गुणों का उल्लेख नीचे किया गया है :-

* जोड़ों की सूजन, गठिया में एलोवेरा का जूस लाभदायक होता है, क्योंकि यह सूजन को कम करता है, जिससे रोगी को राहत मिलती है।

* एलोवेरा का जूस 'रक्त रोधक' होता है, जिसके उपयोग से एलर्जी, संक्रमण, अल्सर, त्वचा रोगों छुटकारा मिलता है।

* एलोवेरा का जूस पाचन क्रिया हेतु अत्यंत गुणकारी होता है, जिसके कारण पेट के रोगों, जैसे गैस, पेट में जलन, अम्लता, कब्ज आदि में अत्यंत लाभकारी पाया गया है। भोजन के 20 मिनट पूर्व 25-50 मिलीलीटर जूस लेना चाहिए।

* स्वस्थ त्वचा के लिए एलोवेरा जूस का उपयोग अत्यंत लाभकारी होता है, क्योंकि इसमें त्वचा के लिए आवश्यक पोषक तत्व एवं खनिज लवण पाए जाते है।

* दांतों, मसूड़ों एवं मुंह के छालों के लिए एलोवेरा जूस अत्यंत लाभदायक होता है।

* एलोवेरा का जूस, बहुत कम कैलोरी वाला होता है, परन्तु अत्यंत पौष्टिक होता है, क्योंकि इसमें 18 अमीनो एसिडस, विटामिन बी (1, 2, 3, 6), सी, ई, फोलिक एसिड, लोहा, कैल्शियम, मैग्नीशियम, ज़िंक, मैगनीज़, तांबा, बोरियम, सल्फेट एवं महत्वपूर्ण एन्जाइम, ग्लाईकोसाइड सहित 200 पोषक तत्व पाए जाते है, जो शरीर को पौष्टिकता प्रदान करते है, जिसके कारण शरीर स्वस्थ रहता है।

* एलोवेरा का जूस, उच्च रक्तचाप और कोलेस्ट्रोल को प्राकृतिक रूप से कम करता है।

* एलोवेरा का जूस, शरीर से विषाक्त पदार्थों को शरीर से बाहर निकालता है।

* एलोवेरा का जूस आंतों के लिए अत्यंत लाभकारी होता है।

* एलोवेरा का जूस एक उच्च कोटि का 'हैल्थ टॉनिक' होता है, क्योंकि इसमें विटामिन्स, नियासिन, फोलिक एसिड, सोडियम, पोटाशियम, लोहा, तांबा, ज़िंक, कैल्शियम, मैग्नीशियम, क्रोमियम आदि तत्व पाए जाते हैं। प्रोटीन का निर्माण करने हेतु 20 अमीनो एसिड की आवश्यकता होती है और एलोवेरा में 19 अमीनो एसिड्स पाए जाते हैं।

* एलोवेरा का जूस मधुमेह (डायबिटीज़) के उपचार के लिए अत्यंत उपयोगी पाया गया है।

* गुर्दे की पत्थरी के उपचार में एलोवेरा अत्यंत उपयोगी पाया गया है।

* आँखों के विभिन्न विकारों के उपचार हेतु एलोवेरा का जूस उत्तम पाया गया है।

* एलोवेरा के जूस का त्वचा, रेशम, सनबर्न जलने, कटने, घाव ठीक करने हेतु बाह्य उपयोग किया जाता है।

* एलोवेरा जूस का उपयोग सौन्दर्य प्रसाधनों उद्योग में बड़े पैमाने पर किया जाता है। जैसे साबुन, शैम्पो, क्रीमों आदि में प्रचुर मात्रा में उपयोग किया जाता है।

* विदेशों में इसके जूस से 'कोल्ड ड्रिंक्स' बनाए जाते हैं, जो दिनों-दिन अत्यंत लोकप्रिय होते जा रहे हैं।

नोट : आजकल बाज़ार में एलोवेरा के अनेक बांड उपलब्ध हैं। इनमें मिलावट हो सकती है। इसलिए किसी भी ब्रांड का उपयोग करते समय कृपया उस पर लिखे विवरण को पढ़ कर ही उपयोग करें। साथ ही विश्वसनीय कम्पनी का उत्पाद ही खरीदें।

आप सही उत्पाद को देख कर खरीदें। यदि किसी एलोवेरा जूस के सेवन से आपको अतिसार, उदर शूल आदि 2-3 दिन तक हो, तो इसका सेवन तुरंत बंद कर दें।

— गंगाशरण सैनी, फरीदाबाद

शेष पृष्ठ 3 की

कपास की फसल के प्रमुख रोग...

अनियमित आकार के जलसिक्त धब्बे बन जाते हैं। ये धब्बे बाद में भूरे या काले हो जाते है तथा बीज पत्र सिकुड़ जाते है। बीज-पत्रों से संक्रमण तने से होकर पूरे पौधे पर फैल जाता है।

पत्तियों पर : जीवाणु अंगमारी झुलसा रोग के स्पष्ट लक्षण पत्तियों पर दिखते है। पत्तियों की निचली सतह पर असंख्य, छोटे-छोटे जलसिक्त धब्बे बनते है। लेकिन कुछ समय बाद ये धब्बे पत्तियों की दोनों सतहों पर दिखाई देने लगते है। धीरे-धीरे ये धब्बे आकार में बढ़ने लगते है, लेकिन छोटी शिराओं तक ही सीमित रहते है और कोणाकार बन जाते हैं। अत: इस अवस्था को कोणीय धब्बा (एंगुलर लीफ स्पोट) रोग कहते है। ये धब्बे बाद में भूरे तथा काले हो जाते हैं। जीवाणु धीरे-धीरे नई पत्तियों पर फैलने लगते है और पौधा किशोरावस्था में ही मुरझा कर मर जाता है। इस अवस्था को सीडलिंग ब्लाइट कहते है। जब प्रभावित पत्तों की शिराएं आंशिक या पूर्ण रूप से झुलस जाती हैं और शिराओं के अंदर बढ़ता रहता है। ऐसी अवस्था को वेन ब्लाइट/ब्लैक ब्लाइट कहा जाता है। रोग की उग्र अवस्था में रोग ग्रसित पौधों की पत्तियां सूख कर गिरने लग जाती हैं।

शाखाओं एवं टिण्डों पर : जीवाणु अंगमारी झुलसा रोग की उग्र अवस्था में रोग ग्रसित पौधों की पत्तियां सूख कर गिरने लग जाती हैं।

शाखाओं एवं टिण्डों पर : जीवाणु अंगमारी झुलसा रोग की उग्र अवस्था में रोगकारक जीवाणु तने और शाखाओं पर आक्रमण करता है व उनका रंग काला हो जाता है। टिण्डों पर छोटे-छोटे जलसिक्त नुकीले एवं तिकोने धब्बे बन जाते हैं, जोकि आपस में मिलकर बड़े हो जाते हैं। टिण्डों से सड़ा हुआ पानी सा निकलता है और टिण्डे सड़ने लगते हैं।

5. मायरोथिसिम पत्ती धब्बा या झुलसा रोग :

रोग कारक : यह रोग बीज एवं मृदा जनित मायरोथिसिम रोरीडम नामक फफूंद से होता है।

रोग के लक्षण :

मायरोथिसिम रोग मुख्यतया बीज जनित रोग है। इससे संक्रमित पौधों की पत्तियों की ऊपरी सतह पर गोल या अनियमित आकार के भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। इन धब्बों का बाहरी हिस्सा गुलाबी रंग का होता है। कई धब्बे आपस में मिल कर बड़ा धब्बा बना लेते हैं। रोग की बाद की अवस्था में इन धब्बों का बीच वाला भाग गिर जाता है तथ इस बचे हुए छेद को 'शूट होल' कहते है। ऐसे धब्बे तना, टिण्डे तथा टिण्डे के इतंबजे पर बनते हैं।

6. आल्टरनेरिया पत्ती धब्बा या झुलसा रोग :

रोग जनक : यह रोग बीज जनित आल्टरनेरिया मेक्रोस्पोरा नामक फफूंद से होता है।

रोग के लक्षण : आल्टरनेरिया पत्ती धब्बा रोग बीज जनित रोग है। रोगी पौधों की पत्तियों की ऊपरी सतह पर भूरे रंग के छोटे-छोटे धब्बे बनते हैं, जो बाद में काले भूरे तथा गोलाकार हो जाते हैं। इन धब्बों में बनने वाली गोलाकार वलय इसकी पहचान का मुख्य लक्षण है। ग्रसित पौधों की पत्तियां गिर जाती हैं।

7. कपास का पैरा विल्ट या पैरा विगलन : यह रोग अमेरिकन कपास की बी.टी. संकर किस्मों में मुख्य रूप से लगता है। बी.टी. संकर किस्मों में यह रोग कम-ज्यादा लगभग सभी किस्मों में लगता है।

लक्षण : पैरा विल्ट रोग फसल के पूरी तरह फलन की अवस्था में आने पर सबसे अधिक देखा गया है। इस रोग में पौधे अचानक मुरझा जाते हैं तथा पत्तियां झड़ने लगती हैं। पौधों पर लगे टिण्डे समय से पहले खिल जाते है, जिनमें रूई का वज़न तथा गुणवत्ता सामान्य से कम रह जाती है।

रोग कारक : पैरा विल्ट या पैरा विगलन के कारण सिंचाई करने के लगभग 12-24 घंटे में पौधे अचानक मुरझाने शुरू हो जाते हैं। रोग मुख्यत: पौधों की जड़ों द्वारा पानी के अवशोषण (अपटेक) तथा पत्तियों द्वारा पानी के वाष्पोत्सर्जन में असंतुलन के कारण होता है। ऐसे पौधों की जड़ें पूरी तरह से विकसित नहीं होती। इसमें जल्दी बहने वाली संकर किस्मों, तेज़ धूप एवं अधिक तापमान का भी योगदान रहता है।

शेष पृष्ठ 6 की

अमरूद की वैज्ञानिक खेती

और नीचे की तरफ सूखती चली जाती है, अंत में संपूर्ण पौधा खत्म हो जाता है।

प्रबंधन : ये लक्षण दिखते ही, उस पेड़ को उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए। इसके अलावा बगीचे में पानी एकत्र ना होने दें, पानी का निकास अच्छा रहना चाहिए। हरी खाद व कार्बनिक खाद का उपयोग अवश्य करें।

7. फल मक्खी कीट : यह मक्खी फलों में छेद करके छिलकों के नीचे अंडे देती है।

प्रबंधन : इसकी रोकथाम हेतु फल मक्खी ग्रसित फलों को प्रति दिन इकट्ठे कर नष्ट कर देना चाहिए। प्रौढ़ मक्खियों को मारने के लिए 250 मिलीलीटर मैलाथियान 50 ई. सी. एवं 2.5 किलो गुड़ पानी में मिला कर प्रति बीघा के हिसाब से छिड़काव करें। आवश्यकता अनुसार 10-15 दिन के अंतराल पर इसे दोहरा भी सकते हैं।

फल विकार : अमरूद में फलों का गिरना एक गंभीर विकार है, जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न दैहिक और पर्यावरणीय कारकों के कारण लगभग 45-65 प्रतिशत नुकसान होता है। अमरूद में फलों का गिरना कम करने के लिए जी. ए. (पादप हार्मोन) का छिड़काव प्रभावी पाया गया है।

कम पी.एच. मान व कम उर्वरक वाली मृदाओं में अमरूद की फसल में ब्राजिंग देखी गई है। प्रभावित पौधों की पत्तियों पर लाल से बैंगनी बिखरे हुए धब्बे दिखाई देते हैं। बढ़ी हुई स्थिति में कम उपज व फल पर भूरे रंग के धब्बे दिखते हैं।

दो माह तक साप्ताहिक अंतराल पर 0.5 प्रतिशत डाइअमोनियम फॉस्फेट व जिंक सल्फेट का पर्णीय छिड़काव ब्रोज़िंग को कम करता है। फूल आने से पहले 0.4 प्रतिशत बोरिक एसिड और 0.3 प्रतिशत ज़िंक सल्फेट के छिड़काव से उपज और फलों का आकार बढ़ जाता है। कॉपर सल्फेट का 0.2-0.4 प्रतिशत छिड़काव भी अमरूद की वृद्धि व उपज को बढ़ाता है।

अंतरवर्तीय फसलें : प्रारंभ के 2-3 वर्षों में बगीचों में रिक्त स्थानों में खरीफ में लोबिया, मूंग, उड़द, ज्वार व सोयाबीन तथा जायद में कद्दूवर्गीय सब्ज़ियां और रबी में मटर, गोभी, मेथी आदि को उगाया जा सकता है। परन्तु ध्यान रहे कि सब्ज़ी फसलों की बेलें पौधों पर ना चढ़ें।

लागत : एक एकड़ बाग लगाने पर लगभग 1.25 लाख रुपए का खर्च आता है।

उपज : बडिंग, गूटी या ग्राफ्टिंग वाले पौधे 2 साल में तथा बीजू पौधे 4-5 वर्ष में फल देना प्रारंभ कर देते हैं लेकिन 8-10 वर्ष की आयु में पूर्ण उत्पादन देते हैं। 5 से 6 वर्ष के पौधे से 500-600 फल तथा 8-10 वर्ष को पौधों से अनुमानत: 1000-2000 फल (100 से 200 किलोग्राम) प्राप्त होते हैं।

अमरूद एक जल्दी खराब होने वाला फल है। इसलिए फलों को तुड़ाई करके समीप के बाज़ार में भेज देना चाहिए। दूर के बाज़ार में फलों को तभी भेजा जा सकता है, यदि वह सही तरीके से स्टोर हो। 50 डिग्री सैल्सियस से कम तापमान और 75-80 प्रतिशत सापेक्ष आर्द्रता के साथ अमरूद की शेल्फ लाइफ को 20 दिनों तक बढ़ाया जा सकता है।

आम की किस्में और एकीकृत कीट प्रबंधन

हरपाल सिंह रंधावा, पी.ए.यू. क्षेत्रीय स्टेशन, गुरदासपुर

आम भारतीय लोगों का पसंदीदा फल है, क्योंकि यह किसी भी अन्य फल की तुलना में स्वादिष्ट, विटामिन और खनिज (कैल्शियम, फास्फोरस और आयरन) से भरपूर होता है। आम के अधिक वृक्षारोपण की आवश्यकता है, ताकि हमारी आने वाली पीढ़ी आम के फल और ठंडी छाया का आनंद ले सके, क्योंकि आम के पेड़ की छाया बहुत ठंडी और घनी होती है। इसकी जड़ें बहुत गहरी होती है। इसलिए यह तेज़ हवाओं और तूफानों का तासानी से मुकाबला कर सकता है। एक फल

के रूप में, आम की खेती मुख्य रूप से पंजाब के निम्नलिखित पहाड़ी क्षेत्रों जैसे कि गुरदासपुर, पठानकोट, होशियारपुर, एस.ए.एस. नगर (मोहाली) ज़िलों में की जाती है। पंजाब में आम की फसल लगभग 7987 हैक्टेयर क्षेत्र में उगाई जाती है, जिसकी औसत उपज 172 क्विंटल प्रति हैक्टेयर होती है, जो उम्मीद से काफी कम है। तो, कम उपज और कम गुणवत्ता के कई कारण हो सकते है, परन्तु आम की सही किस्म का चुनाव ना होना और कीटों की सही समय पर रोकथाम ना होना है। असंशोधित किस्मों की बुवाई ही उपज और गुणवत्ता को कम करने में एक प्रमुख बाधा है।

प्रमुख कीट :

आम की गड्हेहड़ी (मैंगो मिलीबग) : यह आम के प्रमुख कीटों में से एक है। इस कीट की एक वर्ष में एक पीढ़ी होती है। निम्फ और मादा दोनों (फोटो 1) जनवरी से अप्रैल तक पुष्पक्रम, कोमल पत्तियों, अंकुरों और फलों के डंठल से पौधे का रस चूसते हैं। नतीजतन, संक्रमित पुष्पक्रम सूख जाते है, फल को समूह प्रभावित करते हैं, जिससे फल भी गिर जाते है। यह कीट पत्तियों, पर शहद जैसा रस (मल-मूत्र) छोड़ते है, जिस कारण कालखिदार फफूंदी विकसित होती है, जो प्रकाश संश्लेषक गतिविधियों को कम करती है। निषेचित मादा कीड़े मिट्टी में नीचे आ जाती है और दरारों में अंडे देती हैं। अंडे से निकलने के बाद छोटे बच्चे 3 बार अपना आकार बदलते है और इसके बाद आम के पेड़ों को रेंगती है और बढ़ते अंकुरों व पुष्पगुच्छों पर एकत्र होती हैं। फसल प्रबंधन के लिए गर्मी के महीनों में आम के पेड़ों के चारों ओर गहरी जुताई-खुदाई करें ताकि अंडों को नष्ट किया जा सके। दिसम्बर के मध्य तक निचले हिस्से पर एक फिसलन बैंड लगा कर कीटों को पेड़ के तने में रेंगने से रोका जाना चाहिए, जिसमें 15-20 सैंटीमीटर चौड़ी एल्केथीन शीट को तने के नीचला सिरे पर लगाया जाता है और इसके ऊपरी व निचले किनारों को 1-3 कीलों 2 सैंटीमीटर से सुरक्षित करता है। अल्कलथीन शीट के निचले किनारे के चारों ओर संकुचित मिट्टी के साथ कवर करना वांछनीय है, ताकि अप्सराओं को फिसलन बैड के नीचे से पर चढ़ने से रोका जा सके। बारिश के दौरान कभी-कभी बैंड को पोछना भी ज़रुरी है।

आम के टिड्डे और छिटप्पे भार तेला (मैंगो हॉपर) : यह आम का एक गंभीर कीट है, जो 50 प्रतिशत तक नुकसान पहुंचा सकता है। फूल आने के समय फरवरी-मार्च के दौरान हॉपर बहुत सक्रिय होते हैं। मादाएं फूलों की कलियों और कोमल पत्तियों पर अंडे देती है। इस कीट के वयस्क और बच्चे है, बड़ी संख्या में निविदा भागों (पंखों पुष्पक्रम पत्तियों और फलों का रस चूसते हैं) जिससे पौधों की शक्ति कम हो जाती है और विशेष रूप से पुष्पक्रम नष्ट हो जाता है (फोटो 2)। ग्रसित फूल चिपचिपे और भूरे हो जाते है, सिकुड़ जाते है और अंततः गर्मी की हवा चलने पर गिर जाते है। टिड्डे गर्मियों के दौरान छायादार स्थानों को पसंद करते हैं और पुराने उपेक्षित व घने बागों में उनकी आबादी अधिक है। प्रभावी नियंत्रण के लिए सर्दियों के दौरान पुराने घने बागों की कुछ शाखाओं की छंटाई करें ताकि बेहतर प्रकाश अवरोधन हो सके। आम के पौधों को बहुत घना न लगाएं और आवश्यकता अनुसार अनुशंसित उर्वरक लगाएं। मैलाथियान 50 ई.सी. 800 मिलीलीटर की दर से 500 लीटर पानी प्रति एकड़ दो स्प्रे पहला फरवरी के अंत में और दूसरा मार्च के अंत में करें।

आम स्केल (जूं कीट स्केल) : कभी-कभी कुछ इलाकों में एक मंदिर कीट के रूप में इकट्ठा होता है। यह पत्तियों, टहनियों और फलों से कोशिका रसचूस कर नुकसान पहुंचाता है और उपज को गंभीर रूप से प्रभावित करता है।

तना छेदक कीट : कभी-कभी ये कीट आम के तनों पर मोरियां करके तने को नाकाम कर देता है। इसकी सुंडियां तने की छाल के नीचे टेढ़े-मेढ़े छेदों के अंदर से तने चढ़ते है और तने को अंदर से खा जाते है (फोटो 3)। जब सुंडियां सैपवुड (अंदर की लकड़ी) तक पहुंचती है, तो तना सूख जाता है, इसका हमला तब तक दिखाई नहीं देता, जब तक कि टहनियां या पत्तियां सूख कर गिरने ना लगें। कभी-कभी इन टहनियों से रस और खराब छेद निकलने लगते है। छंटाई को रोकने के लिए, तने को घायल होने से रोकें और सुंडियों को मारने के लिए लोहे के तार को छेद में घुमाएं। सुंडी, छाल और मुख्य तनों में जिग-जैग मांद या बिल बनाते है, ऊपर की ओर बढ़ते हुए, आंतरिक ऊतकों को खिलाते हैं। आमतौर पर, जब तक एक शाखा या पत्तियां सूखने लगती है, तब तक हमले पर ध्यान नहीं दिया जाता है। कभी-कभी ऊबड़-खाबड़ छिद्रों से मल-मूत्र और गंदगी के ढेर निकलते देखे जाते हैं। प्रबंधन के लिए सुंडी द्वारा बनाए गए छेद में लोहे के तार डाल कर ग्रब को मारने की ज़रुरत है।

किस्म	विशेषताएं	फल पकने का समय
अल्फांसो	फल मध्यम आकार का, अंडाकार, फल का रंग हरा, हल्का पीला, समीपस्थ, सिरे की ओर हल्के गुलाबी रंग बाहरी परत, छिलका पतला और चिकना, गूदा कैडमियम पीला और सख्त, रेशेदार, अच्छा स्वाद, छोटी गुठली के साथ ज्यादा मात्रा में रस, औसत फल उपज 70 किलो पेड़ है।	जुलाई के पहले सप्ताह
दशहरी	फल छोटा से मध्यम, छिलका मध्यम मोटा, चिकना और पीला, रेशे रहित, सुखद मीठा, गुठली छोटी और पतली होती है। औसत फल उपज 150 किलोग्राम प्रति पेड़ है।	जुलाई के पहले सप्ताह
लंगड़ा	फल मध्यम से बड़ा, छिलका मध्यम मोटा, चिकना, हरा मांस रेशेदार, हल्का पीला, स्वाद और गुठली मध्यम मोटाई की होती है। औसत फल उपज 100 किलोग्राम प्रति पेड़ है।	जुलाई के दूसरे सप्ताह
गंगियन संधूरी (जी.एन.-19)	फल बड़े, अंडाकार आयताकार, छिलका मोटा, सख्त, पीले आधार के साथ कंधों पर सिन्धुरी छिलका, नारंगी रंग का गूदा, सुखद स्वाद के साथ बहुत अच्छा स्वाद, प्रचुर मात्रा में रस, रेशे गुठली पर मौजूद होते है। औसत फल उपज 84 किलोग्राम प्रति पेड़ है।	जुलाई के अंत
जी.एन.-1	फल मध्यम आकार का, अंडाकार, बेसल साइनस उथला, चोंच और शीर्ष नुकीला होता है। छिलका चिकना, पकने पर हरा, गूदा नारंगी रंग और रस पतला, गुठली बिना रेशों के छोटी होती है। यह मध्यम उपज के साथ नियमित रूप से असर कर रहा है।	जुलाई के दूसरे सप्ताह
जी.एन.-2	फल आकार में मध्यम से बड़े, अंडाकार-तिरछे, छिलका मोटा, गूदा पीला, गुठली छोटी और रेशेदार होती है।	जुलाई के तीसरे सप्ताह
जी.एन.-3	फल मध्यम आकार के, अंडाकार, छिलके मोटे, सतह चिकनी, पलक हरे रंग की होती है। गूदा पीला, रस प्रचुर मात्रा में, गुठली मध्यम आकार की।	जुलाई के दूसरे सप्ताह
जी.एन.-4	फल अतिरिक्त बड़े अंडाकार आयताकार होते है। पीले हरे रंग का छिलका होता है। रस प्रचुर मात्रा में थोड़ा गाढ़ा गुठली बड़ी और विरल रेशेदार।	जुलाई के तीसरे सप्ताह
जी.एन.-5	फल मध्यम आकार के अंडाकार, छिलका मोटा व चिकना और रस थोड़ा गाढ़ा, गुठली मध्यम आकार की, रेशे अनुपस्थित होते है।	मौसम में देर से पकना
जी.एन.-6	फल बड़े छिलका का रंग पीला होता है और बेसल सिरे पर लाल छिलक होता है। गूदा पीला होता है, रस सुखद स्वाद के साथ प्रचुर मात्रा में होता है। गुठली मध्यम, तिरछी और चारों तरफ रेशेदार। इस किस्म को लोकप्रिय रूप से *पंजाब ब्यूटी* के नाम से जाना जाता है।	जुलाई के मध्य में
जी.एन.-7	फल मध्यम आकार का, छिलका चिकना होता है, जिसमें कई रेशे होते है, गूदा नारंगी रंग का, रस भरपूर और स्वादिष्ट होता है, गुठली आकार में बड़ी और पूरे पत्थर पर रेशेदार होती है।	जुलाई के मध्य में

टहनियों में छेद करने वाला कीड़ा : छोटे भृंग (सुंडी) पीले नारंगी रंग के होते है और सिर के पीछे गहरे भूरे रंग का भाग होता है। बड़े भौरा गहरे नारंगी रंग के होते है और ऊपर पर बदसूरत धब्बे होते है। मादा कीट नरम पत्तियों पर अंडे देती है, नरम पत्तियों के बीच की रेखा में अंडे देती है। इन अंडों में से छोटी सुंडी, कुछ दिनों के बाद इन छिद्रों से बाहर निकल कर बढ़ती है। नरम टहनियों के सिरों पर छेद करती है। फिर उनके हमले को बिल और मल के छिद्रों से देखा जा सकता है। जब ये सुंडी बढ़ती है, तो पौधे की छाल के अंदर की दरारों में या गुच्छे-मुच्छों के फूलों में या ज़मीन में दरारों में बड़े-बड़े पतंगे बन जाते है। आक्रमणकारी शाखाओं की पत्तियां मुरझा कर गिर जाती है (फोटो 4) जब ये पूरी तरह से विकसित हो जाते है, तो ये सुंडियां बाहर आती है और पेड़ की छाल में छरारों में प्रवेश करते है। प्रभावित टहनियों की पत्तियां मुरझा कर नीचे गिर जाती है। युवा-नई कलम बांधे गए पौधे गंभीर रूप से प्रभावित होते है और मर भी सकते है।

तालिका : आम के कीटनाशी के हानिकारक लक्षण

फोटो	कीट	हमले के लक्षण
1	मैंगो मिलीबग	
2	आम के टिड्डे या मैंगो हॉपर	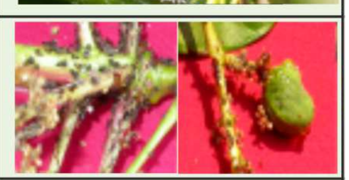
3	तना छेदक सुंडी	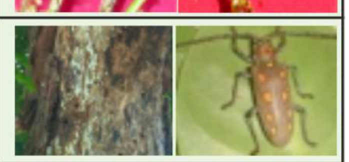
4	मैंगो शूट बेधक (आम शूट बेधक)	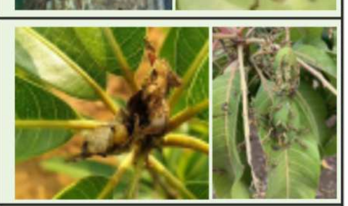
5	फल मक्खियां	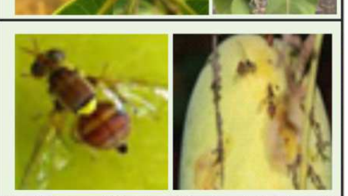

फल-मक्खियां : फलों की फसलों में फल मक्खियां दो प्रकार की होती है और ये बहुपक्षी प्रकृति की होती हैं। मादा मक्खी पकने वाले आम के फल की तरह सुई (ओवी पॉज़िटर) में घुसा कर पंचर करती है और अंडे अंदर देती है। अंडे सेने के बाद मैगॉट्स (कीड़े) गूदे पर भोजन करते है। पंचर से चिपचिपा द्रव निकलता है। अंडाशय के स्थान के चारों ओर भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते है और प्रभावित फल सड़ने लगते है (फोटो 5)। प्रभावित फल समय से पहले गिर जाते है। आम के फलों पर फल मक्खियों की गतिविधि मई के अंतिम सप्ताह से जुलाई के अंतिम सप्ताह के दौरान होती है। इसलिए रोकथाम के उपाय के लिए मई के तीसरे सप्ताह में पी.ए.यू. फ्रूट फ्लाई ट्रैप (16 ट्रैप प्रति एकड़) की दर से लगाएं। ज़रुरत पड़ने पर 30 दिनों के बाद ट्रैप को रिचार्ज करें।

पी.ए.यू. फ्रूट फ्राई ट्रैप

पहाड़ों की संवेदनशीलता के अनुरूप हो विकास

ज्ञानेन्द्रा रावत

पर्वतीय इलाकों में मैदानी इलाकों की तरह काम नहीं किया जा सकता। इसके लिए एक अलग दृष्टिकोण अपनाने की जरूरत है। ध्यान रखना होगा कि यदि हम प्रकृति की राह में बाधा डालेंगे, तो उसका खमियाजा हमें ही भुगतना होगा।

पिछले कुछ वर्षों से हिमालयी क्षेत्र लगातार आपदाओं का सामना कर रहा है - चाहे 2013 की केदारनाथ त्रासदी हो, 2021 की ऋषिगंगा आपदा, 2023 में ल्होनक झील फटना, जोशीमठ का भूधंसाव हो या हालिया बादल फटना और भूस्खलन की घटनाएं। इन आपदाओं के पीछे जलवायु परिवर्तन, मानसून की अनिश्चितता, अरब सागर की गर्म हवाएं और दक्षिण-पश्चिमी हवाओं का उत्तर की ओर झुकाव जैसे प्राकृतिक कारण तो हैं ही, सबसे बड़ा कारण प्रकृति में अनियंत्रित मानवीय हस्तक्षेप है, जिसकी भारी कीमत हमें हर साल भीषण तबाही के रूप में चुकानी पड़ रही है।

वैज्ञानिक, पर्यावरणविद और शोध लगातार चेतावनी दे रहे हैं कि पहाड़ों पर अवैज्ञानिक और अनियोजित निर्माण, विस्फोटों से जलविद्युत परियोजनाएं, रेलमार्ग, बेतरतीब खुदाई और नदी-नालों के प्राकृतिक मार्गों में हस्तक्षेप से हम आपदाओं को न्योता दे रहे हैं। दुर्भाग्य से विकास के नाम पर सरकारी लापरवाही का आलम यह है कि संवेदनशील भूस्खलन क्षेत्रों में भी बहुमंजिला इमारतों, होटलों और सड़कों का निर्माण अनियंत्रित रूप से जारी है, जो भविष्य के लिए गंभीर खतरा है।

गौरतलब है कि जब धरती की सतह और पहाड़ों को बार-बार खोदा और काटा जाता है, तो बारिश की बूंदें तेजी से बहकर मिट्टी को ढीला कर देती हैं। इससे भूमि की पकड़ कमजोर पड़ती है और आपदाएं, विशेष रूप से भूस्खलन, कई गुना बढ़ जाते हैं। वैज्ञानिक चेता रहे हैं कि जलवायु में आ रहे बदलाव और पहाड़ों पर विकास के नाम पर अंधाधुंध निर्माण विनाश का कारण बन रहा है।

आईपीसीसी की रिपोर्ट के अनुसार ऊंचे इलाकों में एक डिग्री तापमान बढ़ने पर वर्षा की तीव्रता 15 फीसदी बढ़ जाती है। जब गर्म समुद्री हवा भारी नमी लेकर हिमालय से टकराती है तब पहाड़ उसे रोकते हैं। इससे क्युम्यलोनिम्बस बादल बनते हैं जो 50,000 फीट ऊंचाई तक जा सकते हैं और जब ये फटते हैं तो भीषण तबाही लाते हैं।

पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय और डीआरडीओ के अनुसार, हिमालयी ग्लेशियर हर वर्ष औसतन 15 मीटर तक पीछे हट रहे हैं। कुछ क्षेत्रों में यह दर 20 मीटर से अधिक है। गंगा बेसिन में ग्लेशियर 15. 5 मीटर, इंडस बेसिन में 12.7 मीटर और ब्रह्मपुत्र बेसिन में 20. 2 मीटर प्रति वर्ष की गति से पीछे खिसक रहे हैं।

दरअसल, जब ग्लेशियर पिघलते हैं, उसके नीचे की जमीन अस्थिर होती जाती है। पिघलती बर्फ, दरकती चट्टानें और अचानक बनने वाली झीलें सबसे बड़ी चिंता का विषय हैं। रिपोर्ट की मानें तो साल 2018 तक कराकोरम और हिन्दूकुश जैसे इलाकों में 127 बड़े ग्लेशियर संबंधित भूस्खलन रिकॉर्ड हुए हैं।

हिमालयी क्षेत्र उत्तराखंड, हिमाचल, सिक्किम सहित कुल 13 राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों में फैला है। मानसून के दौरान यह क्षेत्र प्राकृतिक आपदाओं के प्रति अत्यंत संवेदनशील रहता है। इसकी जटिल भौगोलिक बनावट, नाजुक पारिस्थितिकी और बदलती जलवायु स्थितियां इसे और अधिक जोखिमग्रस्त बनाती हैं।

यह आपदाएं आबादी क्षेत्र, बुनियादी ढांचे और जैव विविधता के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करती हैं। चूंकि इस क्षेत्र में अधिकांश नदियां संकरी घाटियों से होकर बहती हैं, इसलिए बादल फटने या ग्लेशियर झील के फटने के कारण तेज बहाव के साथ बड़ी मात्रा में बोल्डर सहित मलबा भी बह जाता है। परिणामस्वरूप नदियों के रास्ते अवरुद्ध हो जाते हैं और निचले इलाकों में बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

विशेषज्ञ भी मानते हैं कि जलवायु परिवर्तन और पर्वतीय इलाकों में जारी विकास परियोजनाओं से प्राकृतिक आपदाओं का खतरा लगातार बढ़ता ही जा रहा है। वर्ष 2021 में उत्तराखंड में पानी के तेज बहाव के कारण धौलीगंगा नदी में एक हाइड्रोपावर प्रोजेक्ट पर काम कर रहे कर्मचारियों पर चट्टानें और मलबा आ गिरा, जिससे 200 से अधिक लोगों की मौत हो गई थी। गौरतलब है कि हिमालयी इलाके में बरसों से जारी खनन से नदी तल का क्षरण हो रहा है। इसके चलते नदियां सूख रही हैं, नतीजतन बाढ़ और भूस्खलन का खतरा बढ़ रहा है। यही नहीं खनन से निकलने वाले रसायन मिट्टी और पानी को प्रदूषित करते हैं। खनन से वन्य जीवों के आवास खत्म हो रहे हैं, जिससे जैव विविधता को काफी नुकसान हो रहा है। खनन से जहां लोग अपने घरों से विस्थापित हो रहे हैं, वहीं स्थानीय लोगों की आजीविका, कृषि और पर्यटन पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है तथा पर्यावरण और सामाजिक-आर्थिक दोनों तरह के खतरे पैदा हो रहे हैं।

ध्यान रखना होगा कि हिमालय दुनिया की सबसे युवा पर्वत शृंखला है। भूगर्भीय दृष्टिकोण से यह अभी भी अधपका है और निरंतर बदलाव के दौर से गुजर रहा है। यह जानते-समझते हुए भी हम वहां बेतहाशा कंक्रीट का निर्माण कर रहे हैं, जिसमें नदियों के जलग्राही क्षेत्रों को भी नहीं छोड़ा गया है। जब हम वहां जाकर बसेंगे तो भूस्खलन, बाढ़, हिमस्खलन, भूकंप और बादल फटने जैसी प्राकृतिक घटनाएं तो आएंगी ही।

प्रकृति की संवेदनशीलता के प्रति हमें अत्यंत सतर्क और संवेदनशील होना होगा। यदि हम प्रकृति से खिलवाड़ करेंगे, तो निश्चित है कि ऐसी आपदाओं का सामना लगातार करना पड़ेगा। हिमालयी पर्वतीय क्षेत्र में भौगोलिक और पर्यावरणीय दृष्टि से पूर्वसूचना प्रणाली पर तत्काल कार्य करना आवश्यक है।

यहां प्राथमिकता के आधार पर कार्य किया जाना चाहिए, यह समझते हुए कि पर्वतीय इलाकों में मैदानी इलाकों की तरह काम नहीं किया जा सकता। इसके लिए एक अलग दृष्टिकोण अपनाने की जरूरत है। ध्यान रखना होगा कि यदि हम प्रकृति की राह में बाधा डालेंगे, तो उसका खमियाजा हमें ही भुगतना होगा।

लेखक पर्यावरणविद् हैं।

पर्यावरण भी प्राथमिकता हो डिजिटल युग में

अब हम ऐसे प्राइमरी स्कूलों की संभावनाएं देख रहे हैं, जहां बच्चों को आरंभ से ही डिजिटल और कृत्रिम मेधा की शिक्षा दी जाएगी। लेकिन इस दौड़ में कहीं स्कूलों की हरियाली समाप्त न हो जाए। कहीं खेल मैदान बहुमंजिला इमारतों की भेंट न चढ़ जाएं।

शिक्षा वह माध्यम है, जिसके सहारे हम तेजी से बदलती दुनिया के साथ कदम से कदम मिला सकते हैं। आज की दुनिया में कृत्रिम मेधा का बोलबाला है। रोबोट मनुष्य का स्थान लेने लगे हैं, क्योंकि संपन्न निवेशकों को लागत प्रबंधन में यही उपयुक्त लगता है। ऐसे में शिक्षा को यह सुनिश्चित करना होगा कि ज्ञान सही दिशा में पहुंचे, न कि डीपफेक और साइबर अपराध जैसे खतरनाक गलियारों में खो जाए।

यदि सर्वेक्षण बताते हैं कि बच्चों को दस तक का पहाड़ा या प्रतिशत निकालना भी नहीं आता, तो सवाल उठता है, वे इस बदलती दुनिया के ज्ञान से कैसे कदम मिला पाएंगे? सुप्रीम कोर्ट ने अपने एक निर्णय में स्पष्ट किया है कि भारत में शिक्षा क्रांति का अर्थ केवल व्यावसायिक विस्तार नहीं है। शिक्षा संस्थानों का निर्माण करते समय पर्यावरणीय प्रभावों का संज्ञान लेना आवश्यक है। 29 जनवरी, 2025 को केंद्र सरकार की एक अधिसूचना कोर्ट के विचाराधीन हुई, जिसमें औद्योगिक शेड, स्कूल, कॉलेज और छात्रावास जैसी परियोजनाओं को पर्यावरण प्रभाव मूल्यांकन अधिसूचना, 2006 के तहत पूर्व पर्यावरण मंजूरी से छूट प्रदान की गई थी।

अधिसूचना में यह स्वीकार किया गया कि 20,000 वर्गमीटर से अधिक क्षेत्र में निर्माण कार्य पर्यावरण को प्रभावित करेगा, लेकिन यह भी कहा गया कि इन संस्थानों का राष्ट्रीय विकास में इतना महत्व है कि इन्हें पूर्व मंजूरी से मुक्त किया जा सकता है। सुप्रीम कोर्ट ने अपने निर्णय में कहा कि विकास और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन अत्यंत आवश्यक है। जब यह संतुलन बिगड़ता है, तो घुटन, हरित क्षेत्र की कमी, खेल के मैदानों का लोप और शिक्षा के नाम पर व्यापार का विस्तार देखने को मिलता है।

बीते वर्षों में अनेक राजनीतिक दलों ने शिक्षा क्रांति के विभिन्न मॉडल प्रस्तुत किए हैं। यह कहा जाता है कि शिक्षा केवल निजी पब्लिक स्कूलों की बंधक नहीं होनी चाहिए। नीति यह होनी चाहिए कि सरकारी स्कूलों को इतना सक्षम बनाया जाए कि माता-पिता को अपने बच्चों को निजी स्कूलों में भेजने की कोई जल्दबाजी न रहे। लेकिन इस लक्ष्य के बावजूद, सरकारी स्कूल अब भी उस स्तर को नहीं छू पा रहे हैं, जिसकी कल्पना करके हमने निजी स्कूलों के वर्चस्व को चुनौती देने की कोशिश की थी।

सवाल यह है कि इतने प्रयासों के बावजूद, शिक्षा क्षेत्र में बड़े निवेशक क्यों प्रवेश कर रहे हैं? क्या शिक्षा अब सेवा नहीं, एक लाभकारी व्यवसाय बन गई है? अब तो स्कूलों के बीच नए स्कूल खोलने की परंपरा-सी बन गई है। पहले जहां खेल मैदान हुआ करते थे, वहां अब नर्सरी और प्री-नर्सरी की कक्षाएं बन रही हैं।

कहा जाता है कि निजी पब्लिक स्कूल एक लाभकारी सौदा बन चुके हैं। हर वर्ष इन स्कूलों की फीस और अन्य शुल्क बढ़ते जाते हैं। अब प्राइमरी कक्षाओं के साथ-साथ नर्सरी और प्री-नर्सरी भी 'खुलने' लगी हैं - जिनका मकसद शिक्षा कम, व्यापार अधिक लगता है।

संभावना है कि भविष्य में पुरानी शिक्षा प्रणाली अप्रासंगिक हो जाएगी और एक नई 'डिजिटल शिक्षा' उभरेगी, जो डेटा, एल्गोरिद्म और इंटरनेट के इर्द-गिर्द घूमेगी। ऐसे में स्कूलों में हरियाली, खेल मैदान और खुलापन खत्म न हो जाए, यह चिंता का विषय है।

अब हम ऐसे प्राइमरी स्कूलों की संभावनाएं देख रहे हैं, जहां बच्चों को आरंभ से ही डिजिटल और कृत्रिम मेधा की शिक्षा दी जाएगी। लेकिन इस दौड़ में कहीं पर्यावरण बलि का बकरा न बन जाए। कहीं स्कूलों की हरियाली समाप्त न हो जाए। कहीं खेल मैदान बहुमंजिला इमारतों की भेंट न चढ़ जाएं।

कोर्ट ने कहा कि सरकार का यह मानना कि केवल कुछ दिशा-निर्देशों का पालन कर लेने से पर्यावरण सुरक्षा हो जाएगी, पर्याप्त नहीं है। योजनाएं जब विस्तार लेती हैं तो व्यावसायिक हित हावी हो जाते हैं, और विशेषज्ञों की राय की अनदेखी शुरू हो जाती है।

पीठ ने माना कि स्कूल, छात्रावास व अन्य शैक्षणिक संस्थान पर्यावरणीय कानूनों के अधीन रहें और उन्हें पूर्व मंजूरी की अनिवार्यता से मुक्त न किया जाए। अधिसूचना में जो छूट दी गई थी, वह दोहरी मंजूरी प्रणाली में से पर्यावरणीय मंजूरी को हटा देती है। सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया कि यह संशोधन संरक्षित क्षेत्रों और प्रदूषित इलाकों में पर्यावरण मूल्यांकन की प्रक्रिया को कमजोर करता है। इस छूट के पीछे कोई मजबूत तर्क नहीं है, केवल यह संभावना है कि यह निजी शिक्षा क्षेत्र में व्यावसायिक निवेश को बढ़ावा देने का एक औजार बन जाए।

कोर्ट का संदेश साफ है, शिक्षा महत्वपूर्ण है, लेकिन स्वस्थ और स्वच्छ पर्यावरण में। भावी पीढ़ी प्रदूषण और अंधाधुंध निर्माण की शिकार न बने, यही सुप्रीम कोर्ट और हर सजग नागरिक की अपेक्षा है।

- सुरेश सेठ

वैज्ञानिक विधि से फल उद्यान लगायें

राजू लाल भारद्वाज – ललित कुमार,
उद्यान विशेषज्ञ कृषि अनुसंधान केन्द्र, मण्डोर, जोधपुर (राजस्थान)

गतांक से आगे

जलनिकास :– फलोद्यान को उसकी आवश्यकता से कम पानी देने से फल वृक्षों की वृद्धि कम होती है, जबकि आवश्यकता से अधिक पानी देने से भी हानिकारक प्रभाव पड़ता है। पानी की अधिक मात्रा देने से भूमि जलगग्न हो जाती है और फल वृक्षों के खाद्य पदार्थ भूमि की निचली सतहों में चले जाते है। फलों में पानी की अधिक मात्रा होने के कारण मिठास कम हो जाती है तथा स्वाद खराब हो जाता है। अत: अतिरिक्त पानी को तुरन्त खेत से निकाल देना चाहिए जहां तक सम्भव हो उद्यान क्षेत्र का जलस्तर 2-3 मीटर नीचे रहना चाहिए।

सिंधाई और कृतंन :– पौधों में प्रारम्भीक अवस्था से ही सिंधाई कार्य करके पौधों को भूमि से लगभग 5-6 फुट तक सीधा खड़ा करने के बाद चारों दिशाओं में समान रूप से फैलाना चाहिए। पौधे का मध्य भाग हमेशा खुला रखना चाहिए। बाद की अवस्था में जल प्ररोह, सूखी व मरी हुई, रोग ग्रस्त, घिनीकी व एक दूसरे से रगड़ खाती हुई शाखाओं को काटकर निकाल देना चाहिए।

1. बेर के पौधें में ग्रीष्म ऋतु (मई माह) में जब पौधा पूर्ण सुसुप्तावस्था में हो तब एक वर्ष पुरानी वृद्धि का अगला एक चौथाई भाग काट देना चाहिए।

2. अंगूर के पौधों में 10-15 जनवरी के आस-पास कृतंन करना चाहिए। इसमें किस्म के अनुसार पिछले वर्ष की बढ़वार में 4-12 कलिकाओं को छोड़कर कृन्तन करना चाहिए।

3. आम, नीबू, अमरूद, चीकू, अनार, आंवला आदि फलवृक्षों में कभी भी भारी कृन्तन नहीं करना चाहिए। आवश्यकता होने पर रोग ग्रस्त घिनकी एवं सूखी शाखाओं को निकालते रहना चाहिए।

4. पपीते के पौधों में कांट-छांट की आवश्यकता नहीं होती है।

कीट-व्याधियों से रक्षा :– फल-वृक्षों को अनेक कीट-व्याधियों

हानि चहुचाती है अत: उनका समय पर उचित उपचार करना आवश्यक है। इनको रोकने के लिए ठीक समय पर कर्षण क्रियाएं, रासायनिकों का प्रयोग, कठोर जातियों का उगाना तथा अनुकूल मूलवृन्तों का चयन करना चाहिए।

1. कीटों के नियन्त्रण हेतु रोगार, मैलाथियान, फास्फोमिडान, हैस्टाथियान, थायोडान आदि का छिड़काव 2.0-2.5 मिली दवा प्रति लिटर पानी में मिलाकर 7 दिन के अन्तर पर 2-3 छिड़काव करना चाहिए।

2. कवकों से लगने वाली बिमारीयों को रोकने के लिए सल्फेक्स, इन्डोथेन एम-45, रिडोमिल, कुबेर, स्योर, साफ, एट्राक्लोर आदि कवकनाशी दवाओं की 2 ग्राम मात्रा प्रति लिटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

3. तना गलन रोकने के लिए कवकनाशी (कॉपर आक्सी क्लोराईड, इन्डोथेन एम-45) दवा भूमि में ड्रेन्च करनी चाहिए।

4. दीमक की रोकथाम के लिए 25-30 मिली क्लोरोपाईफॉस को 10 लीटर पानी में मिलाकर 15 दिन के अन्तर पर तीन बार जड़ क्षेत्र में डालनी चाहिए।

प्रतिकूल मौसम से बचाव :– प्रतिकूल मौसम फल-वृक्षों को हानि पहुंचाता है। कम तापक्रम से बचाने के लिए उद्यान में स्थान-स्थान पर आग जला कर धुंआ करने, पाले से पहले सिंचाई करके, वायुरोधी पट्टी लगाकर, छोटे पौधों पर जाड़ों में फूंस के छापे बांधकर तथा बड़े हवा चलाने वाले पंखे फलोद्यान में लगाकर पौधों का बचाव किया जा सकता है। अधिक वायुरोधी पट्टियां लगाकर, वृक्षों के ऊपर हल्का छप्पर या एग्रानेट लगाकर, उचित सिंचाई करके, वृक्षों के मुख्य तनों पर सफेदी करना आदि क्रियाऐं करनी चाहिए।

घिनके वृक्षों को उखाड़ना, अन्य को उचित क्षेत्र देना तथा रिक्त स्थानों पर दोबारा रोपण करना- यदि फल वृक्षों को उचित दूरी पर नहीं लगाया गया है तो आवश्यकता से अधिक फल वृक्षों को उखाड़कर तथा पुरक पौधों को नष्ट करके फल वृक्षों को उचित अन्तर पर कर देना चाहिए। अगर फल वृक्षों के बीच-बीच में कही पर पौधे मर गये है तो उन स्थानों पर पुन: रोपण का कार्य भी करना चाहिए, ताकि भूमि का पूर्ण उपयोग हो सके। जिन पौधों की ग्राफ्ट एवं कालिका नष्ट हो गई है उन पर पुन: ग्राफ्टिंग व कालिकायन करना आदि कार्य समय पर करने चाहिए।

उपरोक्त सभी क्रियायें सही समय व उचित विधि से करने से फल उद्यानों से अधिकतम उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

सर्पदंश से मौत पर मिलता है एक लाख रुपए मुआवजा

डेढ़ साल में 367 लोग सर्पदंश के हुए शिकार 8 की मौत, मुआवजे को एक भी आवेदन नहीं

पटियाला में इस साल छह महीने में 81 लोगों को सांपों ने काटा, जिसमें से तीन लोगों की मौत हो गई। पिछले साल 2024 में 286 स्नेक बाइट के केस आए, जिसमें 5 लोगों की जान चली गई। यह

आंकड़ा सिर्फ सरकारी अस्पतालों का है ओर सर्पदंश से मौत के बाद एक लाख रुपए और जख्मी होने पर 25 से 50 हजार रुपए तक मुआवजे का प्रावधान है। हालांकि, नाममात्र कागज़ी कार्रवाई पूरी करने के बाद मुआवजे का प्रावधान है। हैरानी की बात है कि जागरूकता की कमी के चलते लोग मुआवजे के लिए आवेदन ही नहीं करते। आंकड़े इसकी तस्दीक करते हैं। पिछले 2 साल में किसी भी पीड़ित ने मुआवजे के लिए आवेदन नहीं किया। बताते चलें कि पंजाब सरकार ने मार्च 2014 में आपातकालीन चिकित्सा सहायता नीति लागू की थी, लेकिन जागरूकता की कमी के कारण पीड़ितों को मुआवजे का लाभ नही मिल पाता। स्नेक बाइट से रक्षा के लिए एंटी स्नेक वेनम इंजेक्शन लगवाना जरूरी है।

अंधविश्वास के चलते पोस्टमार्टम तक नहीं करवाते लोग

नियमों के मुताबिक सर्पदंश से मौत होने पर पीड़ित परिवार को मुआवजा तभी मिलता है, जब पोस्टमार्टम रिपोर्ट में लिखा हो कि मौत का कारण सर्पदंश है। दूसरा प्रशासन की ओर से पोस्टमार्टम के लिए लोगों को ज्यादा ज़ोर नहीं डाला जाता, तो दूसरी तरफ कई परिजन भी अंधविश्वास के चलते मृतक का पोस्टमार्टम करवाने के लिए तैयार नहीं होते। एक तबका ऐसा भी है, जो सर्पदंश से मौत के बाद शव को जलाते भी नहीं और उसे नदी में बहा देते हैं। पोस्टमार्टम तो दूर की बात है। इसके चलते लोगों को जागरूक करने की जरूरत है कि सर्पदंश से व्यक्ति की मृत्यु होने पर मुआवजे का प्रावधान है।

घरों के आस-पास साफ-सफाई रखें ताकि सांप न आएं

बारिश में सांप अपने ठिकाने छोड़ कर ऐसी जगहों पर जाते है, जहां पानी कम हो और छिपने की सुरक्षित जगह मिले। अगर आप ज़मीन पर सोते है, तो सांपों से बचने के लिए मच्छरदानी का इस्तेमाल जरूर करें। यह सांपों और कीटों से सुरक्षा देती है। साथ ही घर के आस-पास कचरा, घास या लकड़ियां जमा न होने दें। ये सांपों के छिपने की जगहें बन सकती हैं। घर के खिड़की-दरवाजों पर जाली और डोर स्वीप्स लगाएं, ताकि सांप अंदर न जा सकें।

डॉ. आर.पी.एस. सीबिया, मेडिसिन एक्सपर्ट एवं डायरैक्टर प्रिंसिपल मेडिकल कॉलेज, पटियाला

मौत होने पर ज़िला सामाजिक सुरक्षा विभाग को सूचना देना जरूरी

सांप के काटने के बाद मुआवजा राशि पाने के लिए परिजनों को सिर्फ दो काम करने होते है, उसके बाद पूरी कार्रवाई प्रशासन करता है। पहला अगर किसी व्यक्ति की सर्पदंश के कारण मौत हो जाती है, तो उसके परिजनों को तत्काल ज़िला सामाजिक सुरक्षा अधिकारी दफ्तर को इसकी सूचना देनी अनिवार्य होती है। वहीं, दूसरा शव का पोस्टमार्टम करवाना जरूरी है और उसकी रिपोर्ट जिसमें सर्पदंश से मौत की पुष्टि हो, अधिकारी को दें। इसके बाद पूरा काम तहसीलदार और एसडीएम कार्यालय करने के बाद डी.सी. दफ्तर को सारी कार्रवाई की रिपोर्ट करता है। इसके बाद डी.सी. दफ्तर द्वारा लाभार्थी के पक्ष में ड्राफ्ट तैयार कर भुगतान किया जाएगा। काटने वाले व्यक्ति को भी औपचारिकताएं पूरी करनी पड़ती है।

सर्पदंश से पीड़ित की मौत होने पर ये दस्तावेज जमा करने अनिवार्य

* डोमिसाइल/रेजिडेंस सर्टिफिकेट * वोटर कार्ड/राशन कार्ड की सत्यापित प्रति * क्लेम फार्म * पोस्टमॉर्टम रिपोर्ट और मृत्यु प्रमाण पत्र * एफ.आई.आर./डी.डी.आर. की प्रति (यदि लागू हो)

सरकार गुणवत्ता बनाए रखने को 15 सितंबर से पहले बासमती धान बिक्री पर प्रतिबंध लगाए

कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (APEDA) की फसल सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार

डॉ. वीरेन्द्र सिंह लाठर,
पूर्व प्रधान वैज्ञानिक अनुसंधान
भारतीय कृषि अनुसंधान
संस्थान, नई दिल्ली
मो. 9416801607

भारत में बासमती धान का वर्ष 2023-24 में कुल क्षेत्रफल 25 लाख हैक्टेयर और लगभग 15 मिलियन टन उत्पादन हुआ, जिसमें से 8.12 लाख हैक्टेयर (पंजाब), 7.87 लाख हैक्टेयर (हरियाणा), 4.61 लाख हैक्टेयर (उत्तर प्रदेश) में क्षेत्रफल रहा है। भारत में बासमती चावल उत्पादन के मामले में पंजाब 3.84 लाख मीट्रिक टन उत्पादन के साथ पहले स्थान पर है। जबकि हरियाणा 3.67 मिलियन मीट्रिक टन उत्पादन के साथ दूसरे और उत्तर प्रदेश 2.0 मिलियन मीट्रिक टन उत्पादन के साथ तीसरे स्थान पर है। वैश्विक स्तर पर कुल बासमती चावल का उत्पादन लगभग 70 प्रतिशत भारत और 30 प्रतिशत पाकिस्तान में उत्पादित होता है।

भारतीय बासमती चावल अनूठे लंबे दाने वाला सुगंधित चावल है, जिसकी खेती भारतीय उपमहाद्वीप में हिमालय की तलहटी के विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र में सदियों से की जाती रही है। अपने अतिरिक्त लंबे, पतले दानों के लिए जाना जाता है, जो पकने पर अपने मूल आकार से कम से कम दोगुने तक बढ़ जाते हैं, बासमती चावल एक विशिष्ट नरम और फूली हुई बनावट, स्वादिष्ट स्वाद, बेहतरीन सुगंध और एक अलग स्वाद प्रदान करता है जो इसे अन्य सुगंधित लंबे दाने वाले चावल की किस्मों से अलग करता है। इसी, गुणवत्ता के कारण बासमती चावल अमेरिका, यूरोप, खाडी के देशों आदि में खूब निर्यात होता है। एपीडा के आंकड़ों के अनुसार वित्त वर्ष 2024-25 में भारत ने 50,312 करोड़ रूपये का 5.24 मिलियन टन बासमती चावल निर्यात किया है।

बासमती चावल के अनूठे गुणों का श्रेय इसके विशिष्ट बढ़ते क्षेत्र की कृषि-जलवायु परिस्थितियों के

साथ-साथ कटाई, प्रसंस्करण और उम्र बढ़ने के सावधानीपूर्वक तरीकों को दिया जाता है। बासमती धान फसल में सुगंध जीन BADH2 सुगंध के लिए जिम्मेदार रासायनिक यौगिक 2-एसिटाइल-1-पाइरोलाइन (2&AP) के उत्पादन को नियंत्रित करता है, और विभिन्न तापमान पर सुगंध की मात्रा (2&AP) को प्रभावित करता है। दिन-रात के औसत 25 डिग्री सैंटीग्रेड से कम तापमान पर BADH2 सुगंध जीन की कार्यशीलता बढ़ने से, बासमती धान फसल में बन रहे चावल के दानों में सुगंध के लिए जिम्मेदार रासायनिक यौगिक 2&AP की मात्रा कई गुना बढ़ जाती है।

उत्तर-पश्चिम भारत में सुगंध जीन की सकारात्मक कार्यशीलता के लिए उपयुक्त तापमान के आधार पर ही बासमती धान उत्पादन के भौगोलिक संकेत (जी.आई.) क्षेत्र चिन्हित और अनुमोदित किए गए हैं। बासमती धान के इन सभी भौगोलिक संकेत (जी.आई.) क्षेत्रों में सुगंध जीन की सकारात्मक कार्यशीलता के लिए उपयुक्त तापमान सितंबर से नवंबर महीने में होता है। इसीलिए 15 सितंबर से पहले पकी हुई बासमती धान फसल में सुगंध के लिए जिम्मेदार रासायनिक यौगिक 2&AP की समुचित मात्रा होने की संभावना बहुत कम रहती है। बीज अधिनियम 1966 की धारा 3 के तहत बासमती धान किस्मों के बीज की गुणवत्ता बासमती चावल की सुगंध की मात्रा, दाने की लम्बाई-चौड़ाई आदि मानकों के आधार पर निर्धारित की गई है।

लेकिन दुर्भागय से उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड के किसान अनुचित लाभ के लिए, भूजल बर्बादी की कीमत पर, साठी बासमती धान फसल की रोपाई अप्रैल-मई में करके जुलाई-अगस्त में बासमती धान बिक्री के लिए मंडियों में ले आते हैं। जो सुगंध के लिए जिम्मेदार रासायनिक यौगिक 2&AP की निर्धारित मात्रा नहीं होने के कारण, तकनीकी तौर पर बासमती धान की श्रेणी में नही आती है, जिसे आढ़ती और व्यापारी वर्ग औने-पौने दाम में खरीदकर, भ्रष्टाचार करने के लिए बासमती धान में मिलावट करते हैं। जिससे निर्यात होने वाले बासमती चावल की गुणवत्ता में भारी कमी दर्ज होती है।

राष्ट्रीय पोर्टल एगमार्कनेट (Agmarknet) पर उपलब्ध जानकारी के अनुसार, इस वर्ष खरीफ सीज़न में 18 अगस्त, 2025 तक उत्तर प्रदेश और हरियाणा की मंडियों में 70 हजार टन से ज्यादा बासमती धान की मंडियों में बिक्री हुई। जो उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड में उत्पादित बासमती धान का लगभग 20 प्रतिशत हिस्सा है। जबकि पंजाब और हरियाणा में साठी धान की खेती पर प्रिजरवेशन आफ सबसायल ग्राऊंड वाटर एक्ट-2009 के अन्तर्गत पूर्ण प्रतिबंध लगाए गए है। इसलिए राष्ट्रीय हित में भूजल बर्बादी रोकने और बासमती धान की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए, इसी तरह के कानूनी प्रतिबंध उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड आदि राज्यों में लगाए जाने चाहिए और 15 सितंबर से पहले उत्तर पश्चिम भारत की कृषि मंडियो में बासमती धान की बिक्री पर भी प्रतिबंध होना चाहिए।

गडवासू, नेस्ले आरएंडडी टिकाऊ डेयरी पोषण पर करेंगे खोज

गडवासू, लुधियाना ने नेस्ले आरएंडडी सैंटर इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, आई.एम.टी. मानेसर के साथ एक महत्वपूर्ण समझौता ज्ञापन (एम.ओ.यू.) पर हस्ताक्षर किए। इस करार पर 'दुधारू गायों में दूध के कार्बन फुटप्रिंट को कम करने और कृषि लाभप्रदता बढ़ाने के लिए पशु आहार का अनुकूलन' विषयक एक सहयोगी शोध परियोजना के लिए हस्ताक्षर किए गए।

पशु पोषण विभाग के प्रमुख डॉ. जे.एस. हुंदल के अनुसार इस अध्ययन में दूध उत्पादन, पोषक तत्वों की पाचनशक्ति और दूध देने वाली गायों के समग्र प्रदर्शन पर अनुकूलित आहार के प्रभाव का आंकलन किया जाएगा। इस परियोजना का नेतृत्व पशु पोषण विभाग नेस्ले इंडिया की तकनीकी टीम के सहयोग से करेगा। यह परियोजना नेस्ले आरएंडडी सैंटर इंडिया के 30.8 लाख पौंड के वित्त पोषण से समर्थित होगा।

दूध उत्पादन में कार्बन फुटप्रिंट कम करना अहम : वाइस चांसलर

गडवासू के वाइस चांसलर डॉ. जे.पी.एस. गिल ने कहा कि यह सहयोग विज्ञान-संचालित नवाचार के माध्यम से स्थायी डेयरी कृषि पद्धतियों को आगे बढ़ाने की हमारी प्रतिबद्धता को दर्शाता है। कृषि लाभप्रदता में सुधार करते हुए दूध उत्पादन में कार्बन फुटप्रिंट को कम करना जलवायु अनुकूल पशु-पालन की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।